मूल्य : 20/-

पंजी. संख्या : 153/2016-17

वर्ष : २

फरवरी २०१८, विक्रमी सम्वत् २०७४
सृष्टि सम्वत् १९६०८५३११८, दयानन्दाब्द १९४

अंक : २०

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मासिक मुखपत्र

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

"सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

पं. रामचन्द्र देहलवी
स्मृति : 3 फर.

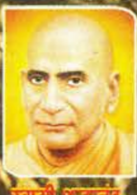

स्वामी श्रद्धानंद
जन्म : 13 फर.

पं. चमूपति
जन्म : 15 फर.

पं. लेखराम
जयंती : 17 फर.

वीर सावरकर
स्मृति : 26 फर.

चंद्रशेखर आजाद
बलिदान : 27 फर.

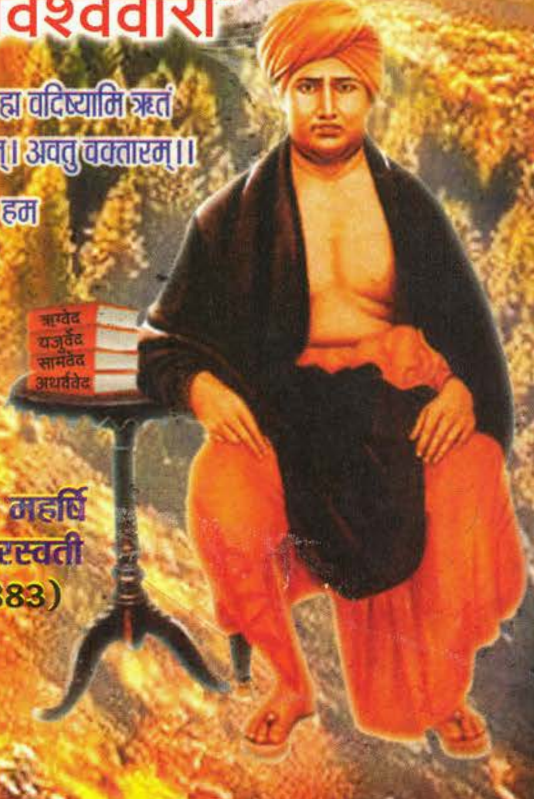

युग प्रवर्तक महर्षि
दयानन्द सरस्वती
(1824-1883)

भव्य वार्षिक उत्सव पर ध्वज फहराते स्वामी विश्वानंद जी एवं संस्था के पदाधिकारी और आचार्यगण।

कार्यक्रम के अवसर पर प्रसन्नमुद्रा में संस्था के प्रधान, मंत्री एवं आचार्य जी

मंच पर उपस्थित श्री आनंद चौहान निदेशक अमीटी संस्थान, डा. वीएस चौहान, श्री सतपाल मल्होत्रा, कै. अशोक गुलाटी।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ के अवसर पर आर्यजन यज्ञ वेदी पर।

चाणक्य नाटक मंचन में मंचासीन चन्द्रगुप्त और चाणक्य।

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

संरक्षक
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
श्री रविन्द्र सेठ 'प्रधान'

प्रबंध संपादक
महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी

प्रधान संपादक
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

व्यवस्थापक
ओमकार शास्त्री

प्रकाशक और मुद्रक
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं प्रधान संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

Title Code : UPMU-200652

घोषणा पत्र संख्या : 153/06.06/2016-17

मूल्य

एक प्रति	: 20/-	**वार्षिक**	: 250/-
पांच वर्ष	: 1100/-	**आजीवन**	: 2500/-

विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100/-

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ
1.	संपादकीय : बलिदान ही जिंदा रहते हैं...	2-3
2.	हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे...	4-5
3.	आर्य दर्शन और धर्म	6-7
4.	उपनिषदों में ईश्वर का...	8-9
5.	जीवनबोध का पर्व...	10
6.	संस्कृत : मुद्राचिकित्सा...	11
7.	आर्य समाज का दशम नियम...	12-13
8.	महापुरुष : स्मृति और नमन...	14-15
9.	अंग्रेजी लेख...	16-17
10.	भारत विश्व गुरु बनने की...	18
11.	परमात्मा से मिलन के लिए...	20-21
12.	मंत्रों की महिमा एवं शक्ति...	23

पाठकवृंद : कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। अपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

लेखकवृंद से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

विज्ञापन दर

पिछला कवर पृष्ठ	:	5100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-2	:	3100 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-3	:	2500 रुपये
पूरा पृष्ठ अंदर	:	1000 रुपये
आधा पृष्ठ अंदर	:	600 रुपये

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।

संपादकीय कार्यालय

आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा- 201301
गौतमबुद्धनगर, (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2505731, 4206693, 9871798221

Web : www.aryasamajnoida.org, E-mail : info.aryasamajnoida33@gmail.com

संपादकीय...

बलिदान ही जिंदा रहते हैं वरदान बदलते रहते हैं

■ आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

इस देश में धर्म जाति, मातृभूमि के लिये बलिदान देने वालों की लम्बी परम्परा है। दुर्भाग्य की बात ये है कि अपने ही देश में देशहित में मरने वाले बलिदानी वीरों के इतिहास को भुला दिया है। हम इस सिद्धांत को भूल गये हैं जो जाति अपने इतिहास को भूल जाती है वह इतिहास के पन्नों से गायब हो जाती है। जनवरी मास में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की जयंती होती है। उनके इस उद्घोष का असर आज भी वैसा है जैसा पहले होता था 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा।'

वीर हकीकत राय का नाम जुबान पर आते ही आज भी सीना गर्व से ऊंचा हो जाता है। वीर हकीकत राय का जन्म 1720 में स्यालकोट में लाला बागमल पूरी के यहां हुआ। इनकी माता का नाम कोरा था। लाला बागमल स्यालकोट के उस समय के प्रसिद्ध सम्पन हिन्दू व्यपारी थे। वीर हकीकत राय उनकी इकलौती संतान थे। उस समय देश में बाल विवाह प्रथा प्रचलित थी,क्योंकि हिन्दुओं को भय रहता था कि कहीं मुसलमान उनकी बेटियों को उठा कर न ले जाये। जैसे आज भी पाकिस्तान और बांग्लादेश से समाचार आते रहते हैं। इसी कारण से वीर हकीकत राय का विवाह बटाला के निवासी किशन सिंह की बेटी लक्ष्मी देवी से बारह वर्ष की आयु में कर दिया गया था।

उस समय देश में मुसलमानों का राज था। जिन्होंने देश के सभी राजनीतिक और प्रशासिनक कार्यों के लिए फारसी भाषा लागू कर रखी थी। देश में सभी काम फारसी में होते थे। इसी से यह कहावत भी बन गई कि 'हाथ कंगन को आरसी क्या और पढ़े लिखे को फारसी क्या।' इसी कारण से बागमल पुरी ने अपने पुत्र को फारसी सीखने के लिये मौलवी के पास मदरसे में पढ़ने के लिये भेजा। कहते हैं वह पढ़ाई में अपने अन्य सहपाठियों से अधिक तेज था, जिससे मुसलमान बालक हकीकत राय से घृणा करने लगे।

एक बार हकीकत राय का अपने मुसलमान सहपाठियों के साथ झगड़ा हो गया। उन्होंने माता दुर्गा के प्रति अपशब्द कहे, जिसका हकीकत ने विरोध करते हुए कहा 'क्या यह आप को अच्छा लगेगा यदि यही शब्द मै आपकी बीबी फातिमा (मोहम्मद की पुत्री) के संबंध में कहूं। इसलिये आप को भी अन्य के प्रति ऐसे शब्द नहीं कहने चाहिये। इस पर मुस्लिम बच्चों ने शोर मचा दिया कि इसने बीबी फातिमा को गालियां निकाल कर इस्लाम और मोहम्मद का अपमान किया है। साथ ही उन्होंने हकीकत को मारना पीटना शुरू कर दिया। मदरसे के मौलवी ने भी मुस्लिम बच्चों का ही पक्ष लिया। शीघ्र ही यह बात सारे स्यालकोट में फैल गई। लोगों ने हकीकत को पकड़ कर मारते-पीटते स्थानीय हाकिम आदिल बेग के समक्ष पेश किया। वो समझ गया की यह बच्चों का झगड़ा है, मगर मुस्लिम लोग उसे मृत्यु-दंड की मांग करने लगे। हकीकत राय के माता पिता ने भी दया की याचना की। तब आदिल बेग ने कहा, मैं मजबूर हूं। परंतु यदि हकीकत इस्लाम कबूल कर ले तो उसकी जान बख्श दी जायेगी। किन्तु उस 13 वर्ष के बालक हकीकत राय ने धर्म परिवर्तन से इंकार कर दिया। अब तो काज़ी, मौलवी और सारे मुसलमान उसे मारने को तैयार हो गए। ऐसे में बागमल के मित्रों ने कहा कि स्यालकोट का वातावरण बहुत बिगड़ा हुआ है, यहां हकीकत के बचने की कोई आशा नहीं है। ऐसे में तुम्हे पंजाब के नवाब ज़करिया खान के पास लाहौर में फरियाद करनी चाहिये।

स्यालकोट से मुग़ल घुड़सवार हकीकत को लेकर लाहौर के लिये रवाना हो गये। हकीकत राय को यह सारी यात्रा पैदल चल कर पूरी करनी थी। उसके साथ बागमल अपनी पत्नी कोरा और अपने मित्रों के संग पैदल चल पड़ा। उसने हकीकत की पत्नी को बटाला उसके पिता के पास भिजवा दिया। कहते हैं कि लक्ष्मी से यह सारी बातें गुप्त रखी गई थी। परंतु मार्ग में उसकी डोली और बंदी बने हकीकत का मेल हो गया। जिससे लक्ष्मी को सारे घटनाक्रम का पता चला। फिर भी उसे समझा-बुझाकर बटाला भेज दिया गया।

दूसरी तरफ स्यालकोट के मुसलमान भी स्थानीय मौलवियों और काजियों को लेकर हकीकत को सजा दिलाने हेतु दल बना कर पीछे पीछे चल पड़े। सारे रास्ते वो हकीकत राय को डराते धमकाते,

तरह-तरह के लालच देते और गालियां निकालते चलते रहे। अगर किसी हिन्दू ने उसे सवारी या घोड़े पर बिठाना चाहा भी तो साथ चल रहे सैनिकों ने मना कर दिया। मार्ग में जहां से भी हकीकत राय गुजरा, लोग साथ होते गये।

आखिर दो दिनों की यात्रा के बाद हकीकत राय को बंदी बनाकर लाने वाले सैनिक लाहौर पहुंचे। अगले दिन उसे पंजाब के तात्कालिक सूबेदार ज़करिया खान के समक्ष पेश किया गया। यहां भी हकीकत के स्यालकोट से आये मुस्लिम सहपाठियों, मुल्लाओं और काज़ियों ने हकीकत राय को मौत की सजा देने की मांग की। उन्हें लाहौर के मुस्लिम उलिमा का भी समर्थन मिल गया। नवाब ज़करिया खान समझ तो गया की यह बच्चों का झगड़ा है, मगर मुस्लिम उलमा हकीकत की मृत्यु या मुसलमान बनने से कम पर तैयार न थे। वास्तव में यह इस्लाम फैलाने का एक ढंग था। सिक्खों के पांचवे गुरु श्री गुरु अर्जुनदेव और नौवें गुरु श्री गुरु तेगबहादुर जी को भी इस्लाम कबूलने अथवा शहीदी देने की शर्त रखी गयी थी।

परंतु यहां हकीकत राय ने अपना धर्म छोड़ने से मना कर दिया। उसने पूछा, क्या यदि मैं मुसलमान बन जाऊ तो मुझे मौत नही आएगी? क्या मुसलमानों को मौत नही आती? तो उलिमाओं ने कहा, मौत तो सभी को आती है। तब हकीकत राय ने कहा, तो फिर मै अपना धर्म क्यों छोड़ूं, जो सभी को ईश्वर की संतान मानता है और क्यों इस्लाम कबूलूं जो मेरे मुसलमान सहपाठियों को मेरी माता भगवती को कहे अपशब्दों को सही ठहराता है, मगर मेरे न कहने पर भी उन्ही शब्दों के लिये मुझसे जीवित रहने का भी अधिकार छीन लेता है। जो दीन दूसरे धर्म के लोगों को गालियां निकालना, उन्हें लूटना, उन्हें मारना और उन्हें पग-पग पर अपमानित करना अल्ला का हुक्म मानता हो, मैं ऐसे धर्म को दूर से ही सलाम करता हूं।

आखिरकार हकीकत राय के माता पिता ने एक रात का समय मांगा, जिससे वो हकीकत राय को समझा सकें। उन्हें समय दे दिया गया। रात को हकीकत राय के माता-पिता उसे जेल में मिलने गए। उन्होंने भी हकीकत राय को मुसलमान बन जाने के लिये तरह-तरह से समझाया। मां ने अपने बाल नोचे, रोईं, दूध का वास्ता दिया। मगर हकीकत ने कहा, माई! यह तुम क्या कर रही हो। तुम्हारी ही दी शिक्षा ने तो मुझे ये सब सहन करने की शक्ति दी है। मैं कैसे तेरी दी शिक्षाओं का अपमान करूं।

अगले दिन वीर बालक हकीकत राय को दोबारा लाहौर के सूबेदार के समक्ष पेश किया गया। सभी को विश्वास था कि हकीकत आज अवश्य इस्लाम कबूल कर लेगा। उससे अंतिम बार पूछा गया कि क्या वो मुसलमान बनने को तैयार है। परन्तु हकीकत ने तुरंत इससे इंकार कर दिया। अब मुस्लिम उलमा हकीकत के लिये सजाऐ मौत मांगने लगे। ज़करिया खान ने इस पर कहा, मैं इसे मृत्यु दंड कैसे दे सकता हूं। यह राष्ट्रद्रोही नहीं है और ना ही इसने हकूमत का कोई कानून तोड़ा है? तब लाहौर के काज़ियों ने कहा कि यह इस्लाम का मुजरिम है।

दरबार में मौजूद दरबारियों ने भी काज़ी की हां में हां मिला दी। इस्लाम के मुताबिक कोई भी व्यक्ति इस्लाम, उसके पैगम्बर और कुरान की सर्वोच्चता को चुनौती नहीं दे सकता। यदि कोई ऐसा करता है तो वो 'शैतान' है। शैतान के लिये इस्लाम में एक ही सजा है कि उसे पत्थर मार-मार कर मार दिया जाये। आज भी जो मुसलमान हज़ पर जाते हैं, उनका हज़ तब तक पूरा नहीं माना जाता जब तक कि वो वहां शैतान के प्रतीकों को पत्थर नहीं मारते। कई मुस्लिम देशों में आज भी यह प्रथा प्रचलित है। लाहौर के मुस्लिम उलिमियों ने हकीकत राय के लिये भी यही सजा घोषित कर दी।

1849 में गणेशदास रचित पुस्तक, 'चार-बागे पंजाब' के मुताबिक इसके लिए लाहौर में बाकायदा मुनादी करवाई गई कि अगले दिन हकीकत नाम के शैतान को (संग-सार) अर्थात पत्थरों से मारा जायेगा और जो जो मुसलमान इस मौके पर सबाब (पुण्य) कमाना चाहे आ जाये। अगले दिन बसंत पंचमी का दिन था जो तब भी और आज भी लाहौर में भी भरी धूमधाम से मनाया जाता है। वीर हकीकत राय को लाहौर की कोतवाली से निकाल कर उसके सामने ही गड्ढा खोद कर कमर तक उसमें गाड़ दिया गया। लाहौर के मुसलमान शैतान को पत्थर मारने का पुण्य कमाने हेतु उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। हकीकत राय से अंतिम बार मुसलमान बनने के बारे में पूछा गया।

इसने लाहौर के काज़ियों ने हकीकत राय को संग-सार करने का आदेश सुना दिया। आदेश मिलते ही उस 13 वर्ष के बालक पर हर तरफ से पत्थरों की बारिश होने लगी। हजारों लोग उस बालक पर पत्थर बरसा रहे थे, जबकि हकीकत 'राम-राम' का जाप कर रहा था। शीघ्र ही उसका सारा शरीर पत्थरों की मार से लहूलुहान हो गया और वो बेहोश हो गया। अब पास खड़े जल्लाद को उस बालक पर दया आ गयी कि कब तक यह बालक यूं पत्थर खाता रहेगा। इससे यही उचित है की मैं ही इसे मार दूं। इतना सोच कर उसने अपनी तलवार से हकीकत राय का सिर काट दिया। रक्त की धारायें बह निकली और वीर हकीकत राय 1742 में बसंत पंचमी के दिन अपने धर्म पर बलिदान हो गये। उनके बलिदान को नमन! OO

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे

इस अंक में ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना के दूसरे मंत्र की व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, मनन चिन्तन कर जीवन सफल करें।

- प्रबंध संपादक

(गतांक से आगे...)

स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

जगदीश्वर के गर्भ में, उसकी व्यवस्था में, उसकी छत्रछाया में, पालन होता है। पालन, पोषण, रक्षण, नियमन होता है-परमात्मा की ज्योति का, प्रतिभा का, यश का, ईमान और सत्य निष्ठा का, चरित्र और प्रतिष्ठा का ज्ञान होना आवश्यक था। प्राय: सभी महापुरुषों को, सुधारकों, धर्म प्रचारकों को गाली मिलती हैं, उन पर धूल और पत्थर बरसाये जाते हैं। किंतु सूर्य का प्रचण्ड तपन, मरीचिमाली का तेज मेघमाला में तिरोहित नहीं रहता। प्रभु की व्यवस्था है, मेघमाला छिन्न-भिन्न हो जाती है। बादल छंट जाते हैं, भुवन भास्कर का तेज प्रकट होता है, वह स्व भास्कर नहीं, भुवन भास्कर है। उसका तेज अपने लिए नहीं, संसार के लिए है। उसका यश, उसकी सत्यनिष्ठा, उसका चरित्र विश्व के कल्याण के लिए है। तभी तो विश्वपति, भूतपति, स्वयं उसे अपने गर्भ में, अपनी व्यवस्था में, अपनी देखरेख में स्वयं पालते हैं।

शिशु के उत्पन्न होने के साथ ही माता के स्तनों में दूध का आ जाना, माता का दूध शिशु का सर्वोत्तम पोषण, अन्न पचने की क्षमता होने पर दांतों का निकलना, वृद्धावस्था में पाचन निर्बल होने पर दांतों का चला जाना, थोड़े खाद्य में निर्बाह होना, यह सब प्रभु व्यवस्था ही तो है- **'जब दांत न थे, तब दूध दियो, जब दांत दियो तब अन्न न दैहै।'**

यह है प्रभु के पालन के प्रति समर्पित निष्ठा। जल में, थल में, गगन-पवन में, सागर की उत्ताल तरंगों में, अग्नि शिखा और प्रस्तर खंड में, सर्वज्ञ प्राणी पल रहे हैं। उन्हें उनका अन्न प्राण वहीं मिल रहा है। पालन हार की विश्वव्यापी पालन पद्धति का एक प्यारा कथानक भक्तों में प्रचलित है-

छत्रपति शिवाजी के किसी दुर्ग की मरम्मत हो रही थी। हजारों हजार व्यक्ति रोजी-रोटी कमा रहे थे। शाम का समय था, मजदूरी बंट रही थी। छत्रपति शिवाजी निरीक्षण करने आये थे। मजदूरों को देखा, बंटती मजदूरी को देखा। मानव सुलभ अहंकार ने शिवाजी के हृदय में प्रवेश किया। मन में भाव आया-'हजारों को रोटी मेरी व्यवस्था में मिल रही है। अभिमान मुखमंडल पर झलक आया। शिवाजी के गुरुजी समर्थ गुरुरामदास वहीं थे। शिष्य के चेहरे पर उभरी अहंकार की रेखाएं गुरु की पैनी दृष्टि से छिप न सकीं। गुरुजी ने बड़े सहज भाव से, गुरु की हितबुद्धि से कहा, 'शिवा! सामने वह पत्थर का टुकड़ा पड़ा है, जरा उठाओ तो।' शिवाजी ने सहज भाव से पत्थर उठा लिया। गुरुजी ने उसे तोड़ने को कहा। शिवाजी ने पत्थर को तोड़ भी दिया। देखा-हजारों चीटियां मुंह में अपना खाद्य लिए चल रही हैं। गुरुजी ने मर्मभरी दृष्टि से शिवाजी को देखा- 'इन चीटियों को भोजन कौन देता है? शिवाजी ने अपनी भूल का अनुभव किया। गुरुजी के चरण पकड़ लिए। बोध हुआ- भगवान् हाथी से चींटी तक, कीटपतंग, जलचर-नभचर, सबका पालनहार है। वह भूत पति है, जगत्पति है। जड़-चेतन, चर-अचर सभी उसकी प्रजा हैं। वह सबका स्वामी है, सबका पालनहार है।

प्रभु सूर्यादि ग्रह उपग्रहों का भी पालन करता है। उन्हें नियमों में चलाता है। हमने प्रसिद्ध वैज्ञानिक हक्सले और उसके निबंध 'मरणशील सूर्य' की चर्चा ऊपर की है। हक्सले का कहना है कि सूर्य मर रहा है और एक समय आयेगा जब उष्णता के अभाव में सारे जीवधारी

शिवाजी के किसी दुर्ग की मरम्मत हो रही थी। हजारों हजार व्यक्ति रोजी-रोटी कमा रहे थे। शाम का समय था, मजदूरी बंट रही थी। छत्रपति शिवाजी निरीक्षण करने आये थे। मजदूरों को देखा, बंटती मजदूरी को देखा। मानव सुलभ अहंकार ने शिवाजी के हृदय में प्रवेश किया। मन में भाव आया- 'हजारों को रोटी मेरी व्यवस्था में मिल रही है। अभिमान मुखमंडल पर झलक आया। शिवाजी के गुरुजी समर्थ गुरुरामदास वहीं थे। शिष्य के चेहरे पर उभरी अहंकार की रेखाएं गुरु की पैनी दृष्टि से छिप न सकीं। गुरुजी ने बड़े सहज भाव से, गुरु की हितबुद्धि से कहा, 'शिवा! सामने वह पत्थर का टुकड़ा पड़ा है, जरा उठाओ तो।' शिवाजी ने सहज भाव से पत्थर उठा लिया। गुरुजी ने उसे तोड़ने को कहा। शिवाजी ने पत्थर को तोड़ भी दिया। देखा-हजारों चीटियां मुंह में अपना खाद्य लिए चल रही हैं। गुरुजी ने मर्मभरी दृष्टि से शिवाजी को देखा- 'इन चीटियों को भोजन कौन देता है? शिवाजी ने अपनी भूल का अनुभव किया। गुरुजी के चरण पकड़ लिए। बोध हुआ- भगवान् हाथी से चींटी तक, कीटपतंग, जलचर-नभचर, सबका पालनहार है। वह भूत पति है, जगत्पति है। जड़-चेतन, चर-अचर सभी उसकी प्रजा हैं। वह सबका स्वामी है, सबका पालनहार है।

मर जाएंगे- There will be universal death because of Scarcity of Heat (The Sun is Dying). आस्तिक बुद्धि प्रलय पर विश्वास करती है। किंतु वह भी प्रभु की व्यवस्था में पालन की ही एक प्रक्रिया का अंश है। यह विश्व-मृत्यु Universal death नहीं, अपितु, प्रलयकाल-सृष्टि संपादन के लिए सामर्थ्य संचय का काल है।

इस प्रकार भूतपति का पतित्व, पालनहार की पालन-व्यवस्था का संपादन, सृष्टि-स्थिति-प्रलय, तीनों समयों में सम्यक् रूप से सदा सर्वदा अनवरत् चलता ही रहता है। ग्रह उपग्रह, जड़चेतन, सभी उसके पालन के पात्र हैं। मंत्र का तीसरा खंड है-

सदाधार पृथ्वी द्याम् उत इमाम् : जगदीश्वर पृथ्वी, द्यौलोक और अंतरिक्ष लोक को धारण कर रहे हैं। इमाम् का अर्थ है इसको और भाव है 'अंतरिक्ष लोक।' ब्राह्माण्ड के पृथ्वी, द्यौ और अंतरिक्ष तीन भाग हैं। पृथ्वी और द्यौ का तो नाम ही ले लिया। अब बचा अंतरिक्ष सो इमाम से अंतरिक्ष का ग्रहण कर रहे हैं। इस प्रकार प्रभु, पृथ्वी, अंतरिक्ष और द्यौलोक को धारण कर रहे हैं।

अब थोड़ा विचार 'दाधार' 'धारण करना' पर करते हैं। संस्कृत का धातु है 'डुधाञ् धारणपोषणयो:।' इस प्रकार स: दाधार का दो अर्थ बना- 1. वह भूतपति परमेश्वर पृथ्वीलोक, अंतरिक्ष लोक, और द्यौ लोक को धारण करता है। 2. परमेश्वर तीनों लोकों का पालन पोषण करता है। पालन पोषण पर कुछ विचार हम भूतस्य जात: पतिरेक आसीत्' के प्रसंग में कर चुके हैं। अब थोड़ा विचार धारण करते हैं- **1. धारण का एक प्रयोग है-** हम वस्त्र धारण करते हैं, हम आभूषण धारण करते हैं। पृथ्वी प्राणियों को अपने ऊपर धारण करती है। मनुस्मृति में 'यथा सर्वाणि भूतानि धराधारयते समम्।' 9-311,

2. 'धर्मों धारयति प्रजा:'- धर्म प्रजाओं को धारण करता है धर्म प्रजाओं को नियमों में, व्यवस्था में स्थिर रखता है। यह नियम व्यवस्था आदि से संबंधित है।

3. वाण्येका समलं करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते-पुरुष संस्कृता वाणी को धारण करता है, अर्थात् पुरुष को संस्कृत वाणी पर अधिकार है, वाणी उस पुरुष के वश में है, उसके अभीष्ट के अनुसार प्रयुक्त होती है। इस प्रकार धारण के सुस्पष्ट अर्थ हुए- धारण करना, व्यवस्था में रखना, अधिकार में रखकर उपयोग करना। परमेश्वर ग्रह उपग्रह, लोक लोकांतर सबको व्यवस्था में रखते हैं। सृष्टि के नियमों के अनुसार चलाते हैं। आइंसटीन से पूर्व के वैज्ञानिकों के लिए ब्रह्माण्ड का संचरण, संभरण, संस्थिति सभी अद्‌भुत समस्याएं थीं। प्रभु के नियम उनका धारण, व्यवस्थापन, संचालन करते रहते हैं। गुरुकुल, विद्यालय, फैक्ट्री-मिल, सरकार समाज सभी नियमों पर ही चलते हैं। उसी प्रकार हिरण्यगर्भ, (परमेश्वर) सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को, उसके एक-एक अंश को, अपने अधिकार में रखकर उसका संचालन कर रहे हैं।

कस्मैदेवाय हविषा विधेम् : हम सुखस्वरूप हिरण्यगर्भ प्रभु के लिए अपनी हवि अर्पित करें। यहां 'कस्मैदेवाय्' को लेकर एक विवाद है। कई पश्चिमी विद्वान कस्मैदेवाय् किस देव के लिए ऐसा प्रश्नवाची अर्थ करते हैं। कस्मैदेवाय् कई मंत्रों में पठित है। कस्मै किम् का चतुर्थी विभक्ति में एकवचन का रूप है। लौकिक संस्कृत में तो कस्मैदेवाय का सीधा ही अर्थ है 'किस देव के लिए'। इन मंत्रों को देखकर ही कई यूरोपीय विद्वानों ने निर्णय कर लिया कि वैदिक ऋषियों को ईश्वर तत्व का ज्ञान नहीं था। किंतु यह अर्थ तो संदर्भ से पुष्ट नहीं होता। मंत्र में परमेश्वर के निम्न विशेषण उपस्थित हैं- हिरण्यगर्भ, पूर्व से उपस्थिति, भूतपति, पृथ्वी आकाश आदि को धारण कर रहा है। इतने विशेषणों के पश्चात् अज्ञान का प्रश्न ही नहीं है।

इन विद्वानों की बात तो ऐसे ही बेतुकी है जैसे कोई देवदत्त नामक व्यक्ति के संबंध में कहे कि- ये देवदत्त नामक है, कलकत्ता में रहते हैं, कपड़े के व्यवसायी है, इनका माल दिल्ली-बंबई, मद्रास आदि शहरों में बिकता है। पता नहीं यह कौन है? इतने विशेषणों के पश्चात् कस्मैदेवाय का प्रश्नवाची अर्थ संदर्भ भ्रष्ट है। लौकिक प्रयोग से ऊपर उठकर 'कस्मै' के वैदिक प्रयोग का अर्थ वैदिक व्याख्या ग्रंथों में निम्न प्रकार से देखा जाता है।

1. 'क:सुख:' (निरु. 10-22) सो कस्मै देवाय= सुख स्वरूपाय परमात्मने।

2. 'क:वैप्रजापति:' (ऐत. 3-21) सो कस्मैवाय का अर्थ हुआ सुख स्वरूप प्रजापति परमपिता परमात्मा के लिए। इस प्रकार कस्मैदेवाय का अर्थ हुआ- सुख स्वरूप प्रजापति परमेश्वर के लिए।

कस्मैदेवाय,सुखस्वरूप, हिरण्यगर्भ प्रजापति के लिए 'हविषा विधेम्', हविषा भक्ति विधेम हवि के द्वारा सच्चिदानन्द स्वरूप की भक्ति करें। हवि तो होती है यज्ञ में आहुति देने की सामग्री, भात, मोदक, घी आदि। प्रभु भक्ति भी तो ब्रह्म यज्ञ है। सामान्य रूप से ब्रह्मयज्ञ संध्योपासना, स्वाध्याय को कहते हैं। इस प्रभु भक्ति, ब्रह्मयज्ञ में किस पदार्थ को हवि बनावें, किस पदार्थ की आहुति दें। दयानन्द जी ने परमप्रभु भक्त महर्षि ने, संस्कार विधि में अर्थ दिया है-'हविषा=ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से विधेम= विशेष भक्ति किया करें।' इसका अर्थ यह हुआ कि परमात्मा के भक्तिरूपी यज्ञ, ब्रह्मयज्ञ की हवि 'ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम' है।

00

आर्य दर्शन और धर्म

डा. दीवान चन्द, डी.लिट.

हमारी ज्ञान-इंद्रियां बाहर की ओर खुलती हैं, हम आप बाहर की ओर देखते हैं। कभी अंतर की ओर देखते हैं, और कभी-कभी ऊपर की ओर भी देखते हैं। यह भेद प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिकों में स्पष्ट दिखाई देता है। सुकरात प्राय: अंदर की ओर देखता था; नीति में उसे विशेष अनुराग था। प्लेटो कुछ समय के लिए द्यौलोक से पृथ्वी पर आया था, और इस काल में भी उसका ध्यान द्यौलोक पर ही रहा, तत्व-ज्ञान उसके लिए विशेष अनुराग का विषय था। अरस्तू की आंखें, बाहर की ओर देखती थीं, उसका दृष्टिकोण प्रमुख रूप में वैज्ञानिक था।

इसी प्रकार का भेद हम भारत के दर्शनों में भी देखते हैं। बाह्य जगत, आत्मा और परमात्मा इनके चिंतन के विषय हैं, एक शाखा में स्वयं चिंतन का विषय है। भारत दर्शन की छह प्रमुख शाखाएं तीन जोड़ों में विभक्त होती हैं-

1. सांख्य और योग, 2. न्याय और वैशेषिक, 3. पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा। प्रत्येक दर्शन, जैसा होना ही चाहिए, आरम्भ में ही अपने विषय की बाबत कह देता है।

पहली सांख्य 'कारिका' कहती है : 'तीन प्रकार का दुख चोट लगाता है; इसलिए उसकी अत्यंत निवृत्ति के कारण की जिज्ञासा होती है।'

जब हम किसी प्रकार के दुख को अनुभव करते हैं, तो उसे दूर करने का उपाय कर लेते हैं। भूख-प्यास से उत्पन्न दुख को खा-पीकर दूर कर देते हैं, कुछ घंटों के बाद यह फिर हमें आ पकड़ते हैं। सांख्य दु:खों की अत्यंत निवृत्ति की खोज करना चाहता है, और ज्ञान को इस निवृत्ति का कारण बताता है।

योग चित्त की वृत्तियों का निरोध है। यह निरोध कठिन मानसिक उद्योग का फल है। इस उद्योग में धारणा, ध्यान और समाधि तीन अंतिम मंजिलें हैं। यात्रा के आरंभ में ही, आत्म-संयम की आवश्यकता होती है।

इस संयम के दो पक्ष हैं- एक व्यक्तिगत, दूसरा सामाजिक। पहले संयम को योग की परिभाषा में 'नियम' कहते हैं, दूसरे को 'यम'। दोनों के पांच-पांच आकार हैं, और यह 10 आकार नैतिक जीवन का अच्छा चित्र प्रस्तुत करते हैं। परंतु इनका मूल्य साधन का मूल्य है, जो यात्रा व्यक्ति को समाधि तक पहुंचाती है, उसका आरंभ नियमों और यमों से होता है।

सांख्य की तरह योग भी 'धर्म' को अपने विवेचन का प्रमुख विषय नहीं बनाता। न्याय दर्शन का प्रमुख विषय 'प्रमाण' है। यदि हम स्वीकार करें कि सब मनुष्य मर्त्य है, और कृष्ण मनुष्य है, तो हमें यह अवश्य मानना होता है कि कृष्ण मर्त्य है। प्रमाणों के साथ उन विषयों पर भी विचार होता है, जिन्हें प्रमाणित करने की आवश्यकता होती है। न्याय या तर्क शास्त्र भी धर्म को अपने विचार का विषय नहीं बनाता। वैशेषिक की स्थिति आश्चर्यजनक है।

जैसा इसके नाम से ही पता लगता है, यह 'विशेषों' की बाबत बताता है, ऐसे विशेषों की बाबत, जिनके ऊपर कोई 'सामान्य' नहीं। ऐसे विशेषों को 'परम-जातियां' या 'कैटेगौरिज' का नाम दिया जाता है। सांख्य का उद्देश्य जगत के विकास की बाबत बताना था, वैशेषिक जगत को उसकी वर्तमान स्थिति में लेता है और देखना चाहता है कि इसमें कौन से ऐसे अंश या पक्ष हैं, जो किसी दूसरे में परिवर्तित नहीं हो सकते। ऐसे विशेषों को 'पदार्थ' का नाम दिया जाता है और वैशेषिक 6 पदार्थों का वर्णन करता है। यह इस दर्शन का प्रमुख विषय है, परंतु किसी कारण से आदि और अंत में एक भिन्न ध्वनि सुनाई देती है। दर्शन के पहले चार सूत्र ये हैं-

1. अब धर्म का व्याख्यान होता है, 2. धर्म वह है जिससे अभ्युदय और नि:श्रेयस की प्राप्ति होती है, 3. धर्म का प्रतिपादक होने के कारण वेद प्रमाण है, 4. धर्म विशेष से उत्पन्न हुए 6 पदार्थों द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय के तत्व-ज्ञान से नि:श्रेयस की प्राप्ति होती है। अंत में भी धर्म की ओर

जब हम किसी प्रकार के दुख को अनुभव करते हैं, तो उसे दूर करने का उपाय कर लेते हैं। भूख-प्यास से उत्पन्न दुख को खा-पीकर दूर कर देते हैं, कुछ घंटों के बाद यह फिर हमें आ पकड़ते हैं। सांख्य दुखों की अत्यंत निवृत्ति की खोज करना चाहता है, और ज्ञान को इस निवृत्ति का कारण बताता है। योग चित्त की वृत्तियों का निरोध है। यह निरोध कठिन मानसिक उद्योग का फल है। इस उद्योग में धारणा, ध्यान और समाधि तीन अंतिम मंजिलें हैं। यात्रा के आरंभ में ही, आत्म-संयम की आवश्यकता होती है। इस संयम के दो पक्ष हैं- एक व्यक्तिगत, दूसरा सामाजिक। पहले संयम को योग की परिभाषा में 'नियम' कहते हैं, दूसरे को 'यम'। दोनों के पांच-पांच आकार हैं, और यह 10 आकार नैतिक जीवन का अच्छा चित्र प्रस्तुत करते हैं। परंतु इनका मूल्य साधन का मूल्य है, जो यात्रा व्यक्ति को समाधि तक पहुंचाती है, उसका आरंभ नियमों और यमों से होता है।

संकेत दिया है। इन चारों सूत्रों में हरेक में कुछ विशेषता दिखाई देती है। पहले सूत्र में धर्म का व्याख्यान लेखक का उद्देश्य बताया गया है। सांख्य दर्शन में दु:खों की अत्यंत निवृत्ति के कारण ही 'जिज्ञासा' लक्ष्य है। पूर्वमीमांसा में 'धर्म-जिज्ञासा' और उत्तरमीमांसा में 'ब्रह्मजिज्ञासा' लक्ष्य है।

'व्याख्यान' और 'जिज्ञासा' में पर्याप्त भेद है। व्याख्या करने वाला इस दावे के साथ आरंभ करता है कि उसे विचाराधीन विषय के संबंध में ज्ञान प्राप्त है; वह दूसरों की सीमाओं को ध्यान में रखकर रहस्यों का स्पष्टीकरण करना चाहता है, ताकि दूसरों को भी अपने ज्ञान में साक्षी बना सके। जिज्ञासु, कहता है- 'मैं सत्य की खोज कर रहा हूं; जो कुछ इस खोज का परिणाम होगा, वह अभी तो भविष्य के गर्भ में छिपा है। यदि कोई दूसरा इस प्रयत्न में मेरे साथ होगा, तो जो कुछ मुझे पता लगेगा, वह मेरे साथी की दृष्टि में भी आ जायेगा। जिज्ञासा में नम्रता का भाव मिला होता है, व्याख्यान में ऐसा नहीं होता।

दूसरे सूत्र में 'धर्म' का लक्षण किया गया है। आधुनिक काल में नई दुनिया, अमेरिका, में व्यवहारवाद प्रिय दृष्टिकोण है। एक ऐसे देश में जिसमें अत्यंत अप्रयुक्त सामग्री मौजूद हो ऐसे मनुष्य सहस्रों लाखों की संख्या में पहुंच गये जो अपने देशों में शारीरिक बल में अग्रसर थे, जिनके हृदयों में लौकिक कुशलता के लिए उल्लास मौजूद था। परिणाम वही हुआ जो होना था। उन्होंने अपने परिश्रम से अमेरिका का चित्र ही बदल दिया और अब वे दुनिया की सबसे शक्तिशाली जाति हैं। इन लोगों का दार्शनिक दृष्टिकोण स्वाभाविक ही यह होना चाहिए कि हरेक 'मूल्य' से पूछें कि वह मानव-जीवन में क्या परिवर्तन कर सकेगा। इसी प्रकार की भावना के साथ वैशेषिक दर्शन में 'धर्म' का लक्षण

व्याख्या करने वाला इस दावे के साथ आरंभ करता है कि उसे विचाराधीन विषय के संबंध में ज्ञान प्राप्त है; वह दूसरों की सीमाओं को ध्यान में रखकर रहस्यों का स्पष्टीकरण करना चाता है, ताकि दूसरों को भी अपने ज्ञान में साक्षी बना सके। जिज्ञासु, कहता है- 'मैं सत्य की खोजकर रहा हूं; जो कुछ इस खोज का परिणाम होगा, वह अभी तो भविष्य के गर्भ में छिपा है। यदि कोई दूसरा इस प्रयत्न में मेरे साथ होगा, तो जो कुछ मुझे पता लगेगा, वह मेरे साथी की दृष्टि में भी आ जायेगा। जिज्ञासा में नम्रता का भाव मिला होता है, व्याख्यान में ऐसा नहीं होता। दूसरे सूत्र में 'धर्म' का लक्षण किया गया है। आधुनिक काल में नई दुनिया, अमेरिका, में व्यवहारवाद प्रिय दृष्टिकोण है।

किया गया है, धर्म वह है जिससे 'अभ्युदय' और 'नि:श्रेयस' की प्राप्ति होती है। अभ्युदय लौकिक कुशलता और सफलता है, नि:श्रेयस परम-भद्र है- जो भद्र की पराकाष्ठा है। यह परम गति या मोक्ष है। इन दोनों में नि:श्रेयस का पद बहुत ऊंचा है- इससे परे कुछ है ही नहीं। वैशेषिक में अभ्युदय के विश्लेषण और उसकी प्राप्ति के संबंध में कुछ नहीं कहा, दर्शन का सारा 'व्याख्यान', जैसा हम अभी देखेंगे, नि:श्रेयस प्राप्ति के साधन को अर्पण किया गया है।

पश्चिम में दर्शन शास्त्र के दो प्रमुख भाग स्वीकार किये जाते हैं- तत्व, ज्ञान और ज्ञान-मीमांसा। तत्व ज्ञान का रहस्य यूनानी विवेचन में स्वीकृत है। शदियों तक इसे ही दर्शन समझा जाता रहा। दर्शन का इतिहास वाद विवाद और खंडन की कथा है। नवीन काल में डेकार्ट ने इसे दृढ़ नीवों पर रखने का यत्न किया। इंग्लैंड में जान लॉक ने कहा कि सत्ता को जानने से पहले हमें यह जानना चाहिए कि हमारा ज्ञान कहां तक जा सकता है। जर्मनी के दार्शनिक कांट ने ज्ञान-मीमांसा को दार्शनिक विवेचन के केंद्र में रख दिया। भारत में आरंभ से ही इस मीमांसा के महत्व को माना गया है। दर्शन की हरेक शाखा में 'प्रमाण' के स्वरूप पर विचार हुआ है। तीन प्रमुख प्रमाण प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द हैं। शब्द प्रमाण में वेद प्रमुख है। मनुस्मृति (२:१३) का कथन है कि 'धर्म के जिज्ञासुओं के लिए परम प्रमाण श्रुति है' यह सामान्य मान्यता है। तीसरे सूत्र में वैशेषिक ने भी इसे स्पष्ट किया है। प्रत्यक्ष विशेष तथ्यों का ज्ञान देता है, अनुमान इस पर आधारित होता है। धर्म का संबंध तथ्यों को देखना नहीं, अपितु शुभ और अशुभ में भेद करना है, मुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं चाहिए। इसमें परम प्रमाण वेद है, ईश्वरीय इच्छा का प्रकाश है।

चौथे सूत्र में नि:श्रेयस की प्राप्ति को विशेष प्रकार के ज्ञान का परिणाम बताया गया है। यह दृष्टिकोण बहुतेरे लोगों को अजीब सा प्रतीत होता है। उनकी दृष्टि में इतिहास, भूगोल, गणित, अर्थशास्त्र की तरह दर्शन भी अध्ययन का एक विषय है। कोई मनुष्य यह दावा नहीं करता कि इतिहास, भूगोल या गणित के अध्ययन से परमगति की प्राप्ति होती है। तत्वज्ञान के संबंध में यह दावा क्यों किया जाता है? बात यह है कि भारत में दर्शन को केवल अध्ययन के रूप में नहीं देखा जाता, यह एक प्रकार के जीवन से गठित है। गीता में कहा है कि ज्ञान के बराबर कोई पवित्र करने वाला साधन नहीं है।

(शेष अगले अंक में) ○○

उपनिषदों में ईश्वर का स्वरूप

डा. मुमुक्षु आर्य

ईशावास्योपनिषद- ईशा वास्यम् इद्म सर्वं (मंत्र-1) ईश्वर कण-कण में व्यापक है वही सब जड़ चेतन का मालिक है, हे जीव तू त्याग भाव से, अनासक्त होकर भोगकर। मंत्र-16 में **'पूषम् एकर्षे म सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन समूह।'**...उस परमात्मा को पोषण करने हारा, अनोखा, नियमन करने हारा, प्रचंड प्रकाशमान व प्रजाओं का पालन हारा कहा है। इस मंत्र में आगे कहा 'तजो यत् ये रूपं कल्याणतमं तत् ते पश्यामि'- साधक हर जगह उसका कल्याणतम् रूप देखता है।

केनोपनिषद के खंड 4, मंत्र 5 के केन ऋषि का कहना है कि जड़जगत्, चेतन जगत्, मानसिक जगत् के अंतस् में अपरिमित परमात्म् शक्ति ही काम कर रही है। आगे इसी खंड में मंत्र संख्या 6 में कहा 'तत् वनं उपासितव्यम्' अर्थात् उसी ब्रह्म की भक्ति भाव से, प्रेम भाव से भक्ति करनी चाहिए। ऐसे प्रेमी को सर्वाइच्छा शक्ति सब चाहने लगते हैं। उसके सब दुख दूर हो जाते हैं 'उमा' अर्थात् बुद्धि से, विद्या से, यथार्थ ज्ञान से ही उसे जाना जा सकता है।

कठोपनिषद के यमाचार्य कहते हैं- 'एष सर्वेषु भूतेषु गूढः आत्मा न प्रकाशते' अर्थात् वह ईश्वर सब भूतों में इतनी गहराई से छिपा है कि दिखलाई नहीं देता। उसे देखने के लिए सूक्ष्म बुद्धि चाहिए। हे शरीर रूपी रथ के मालिक आत्मा 'उतिष्ठत जाग्रत प्राप्य बरान निबोधत्'- उठ जाग! श्रेष्ठजनों का, योगी जनों का संग करके उदबुद्ध हो जाओ, बुद्धि रूपी सारथी व मन रूपी लगाम से इन्द्रिय रूपी घोड़ों को श्रेय मार्ग की ओर मोड़ों। 'क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया'- छूरे की तेज धार पर चलने के समान यह आध्यात्म मार्ग है परंतु कल्याण का भी यही एक मार्ग है। आगे 4-5 वल्ली में आत्मा परमात्मा को अशब्द कहा है। वह अंगुष्ठमात्र पुरुषः ज्योतिः इव अधूमकः अर्थात् अंगुष्ठमात्र हृदय देश में विद्यमान निर्मल ज्योति है। जो धीर पुरुष उसे निर्मल बुद्धि से देख पाते हैं उन्हें शाश्वत शान्ति प्राप्त होती है दूसरों को नहीं। 'सर्वे वेदाः यत्पदमामनन्ति ओम् इत्येतत्'- समस्त वेद जिस अक्षर की घोषणा करते हैं जो सब तपों का लक्ष्य है वह ओम् है।

प्रश्नोपनिषद्- पिप्लाद् ऋषि 6 जिज्ञासुओं को उपदेश करते हुए ईश्वर के बारे में कहते हैं कि जिस प्रकार भिन्न-भिन्न नदियां समुद्र में जाकर एक हो जाती हैं वैसे ही प्राण, श्रद्धा, पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश, इन्द्रिय, मन, अन्न, वीर्य, तप, मंत्र, कर्म, लोक तथा नाम से सोलह कलाएं आत्मा तथा ब्रह्म को जानता हूं। तप, ब्रह्मचर्य, श्रद्धा व विद्या को उसकी प्राप्ति के साधन है।

मुंडक उपनिषद्- ब्रह्म के स्वरूप का बखान करते हुए अंगिरा ऋषि कहते हैं- यत् तद् अद्रेश्यम्, अग्राहम्, अगोत्रम्, अवर्णम्, अचक्षुः श्रोत्रम्, अपाणिपादम्। (मुंडक- खंड 1 से 6)

नित्यम्, विभुम्, सर्वगतम्, सुसूक्ष्मं तद् अव्ययम्, यद् भूतयोनिम् परिपश्यन्ति धीराः ॥

वह ईश्वर इंद्रियों से परे, न ग्रहण करने योग्य है उसका कोई वंश, रंग-रूप नहीं, उसके न आंखें हैं, न कान है, न हाथ-पैर है। वह नित्य, सर्वव्यापक, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, अविनाशी है। जो धीर पुरुष उसको जान लेते हैं उसे और कुछ जानने के लिए नहीं रहता आगे कहा कि इद्म सर्वम् तस्य उपव्याख्यानाम्... सब संसार उस ओ३म् की छोटी सी व्याख्या है। 'एषः सर्वेश्वरः', एषः सर्वज्ञः, एषः योनिः सर्वस्य, प्रभव अप्ययौ हि भूतानाम्- अर्थात् वह ईश्वर सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, अंतर्यामी, सबको उत्पन्न करने वाला, सब भूतों का प्रलय करने वाला है। आत्मा परमात्मा के निर्गुणत्व की चर्चा करते हुए ऋषि कहते हैं कि वे अपने यथार्थ रूप में 'न अंतः प्रज्ञ, न बहिः प्रज्ञ, न उभयतः प्रज्ञ, न प्रज्ञान धनं, न प्रज्ञं, न अप्रज्ञम्। अदृश्यम्, अव्यवहार्यम्, अग्राह्यम, अचिन्यम्, अव्यपदेश्यम्, एकात्मप्रत्ययसारम्, प्रपंचोएश्यम्, शान्तम्, शिवम्, अद्वैतम्, चतुर्थ मन्यते, सःआत्मा, सःविज्ञेयः॥' शरीर के कारण आत्मा तथा प्रकृति के कारण ब्रह्म जाग्रत में बहिः प्रज्ञ, स्वप्न में अंतः प्रज्ञ, सुषुप्ति या प्रलय के कारण प्रज्ञानवान है। अव्यपदेश्य का अर्थ है जो वाणक्ष से कहा न जा सके। उसको जानने से सब प्रपंच शांत हो जाते हैं, वे स्वभाव से शान्ति स्वरूप, कल्याणमय, अद्वितीय, अनुपम है उसी को जानना, चाहिए। उपनिषद् का आरम्भ 'ओं इति एतद् अक्षरम्'- इस वाक्य से हुआ है कि जिसका अर्थ है ओं छोटा सा अक्षर है सब उसी की व्याख्या है। ऐतरेय उपनिषद्- सृष्टि उत्पत्ति प्रलय व जीवात्मा का कथानक के रूप में विस्तार से वर्णन करने के पश्चात् ऋषि परमात्मा के बारे में कहते हैं- 'एषः ब्रह्मा, एषः इन्द्र, एषः प्रजापतिः। एते सर्वे देवाः, इमानि च पंच-महाभूतानि... प्रज्ञाने प्रतिष्ठितम्... प्रज्ञानं ब्रह्म'- अर्थात् ये ब्रह्म, ये इन्द्र, ये प्रजापति, सब देव व पंचमहाभूत चेतना में प्रतिष्ठित हैं ओत-प्रोत हैं और वह चेतना ही, प्रज्ञा ही ब्रह्म है ईश्वर है।

उसी से यह विश्व उत्पन्न होता है, वह सर्वज्ञ, गुहाचर अर्थात् हृदय में छिपकर रहने वाला है। वह बहुत भाषण, तर्क या उपदेश श्रवण से प्राप्त नहीं होता। सत्येन लभ्य: वह तो सत्याचरण से प्राप्त होता है भिद्यते हृदय ग्रंथि: छिद्यंते सर्वसंशया:। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन दृष्टे परावरे॥ अथार्त् जब हृदय की गांठे खुल जाती हैं, सब संशय दूर हो जाते हैं, कर्मों का बंधन क्षीण हो जाता है। प्रणव: धनु: शर: हि आत्मा-उपासना में प्रणव धनुष का काम करता है।

माण्डूक्य उपनिषद्- इद्म सर्वम् तस्य उपव्याख्यानाम्... सब संसार उस ओ३म् की छोटी सी व्याख्या है। 'एष: सर्वेश्वर:', एष: सर्वज्ञ:, एष: योनि: सर्वस्य, प्रभव अप्ययौ हि भूतानाम्- अर्थात् वह ईश्वर सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, अंतर्यामी, सबको उत्पन्न करने वाला, सब भूतों का प्रलय करने वाला है। आत्मा परमात्मा के निर्गुणत्व की चर्चा करते हुए ऋषि कहते हैं कि वे अपने यथार्थ रूप में 'न अंत: प्रज्ञ, न बहि: प्रज्ञ, न उभयत: प्रज्ञ, न प्रज्ञान धनं, न प्रज्ञं, न अप्रज्ञम्। अदृश्यम्, अव्यवहार्यम्, अग्राहम्, अचित्यम्, अव्यपदेश्यम्, एकात्मप्रत्ययसारम्, प्रपंचोएश्यम्, शान्तम्, शिवम्, अद्वैतम्, चतुर्थ मन्यते, स:आत्मा, स:विज्ञेय:॥' शरीर के कारण आत्मा तथा प्रकृति के कारण ब्रह्म जाग्रत में बहि: प्रज्ञ, स्वप्न में अंत: प्रज्ञ:, सुषुप्ति या प्रलय के कारण प्रज्ञानवान है। अव्यपदेश्य का अर्थ है जो वाणक्ष से कहा न जा सके। उसको जानने से सब प्रपंच शांत हो जाते हैं, वे स्वभाव से शान्ति स्वरूप, कल्याणमय, अद्वितीय, अनुपम है उसी को जानना, चाहिए। उपनिषद् का आरम्भ 'ओं इति एतद् अक्षरम्'- इस वाक्य से हुआ है कि जिसका अर्थ है ओं छोटा सा अक्षर है सब उसी की व्याख्या है।

ऐतरेय उपनिषद्- सृष्टि उत्पत्ति प्रलय व जीवात्मा का कथानक के रूप में विस्तार से वर्णन करने के पश्चात् ऋषि परमात्मा के बारे में कहते हैं- 'एष: ब्रह्मा, एष: इन्द्र, एष: प्रजापति:। एते सर्वे देवा:, इमानि च पंच- महाभूतानि... प्रज्ञाने प्रतिष्ठितम्... प्रज्ञानं ब्रह्म'- अर्थात् ये ब्रह्म, ये इन्द्र, ये प्रजापति, सब देव व पंचमहाभूत चेतना में प्रतिष्ठित हैं, ओत-प्रोत हैं और वह चेतना ही, प्रज्ञा ही ब्रह्म है ईश्वर है ऋग्वेद (10.190.1) 'ऋतं च सत्यं च अभीद्धात् तपस: अध्याजायतं्'- में यही बात कही गई है।

तैतिरियापनिषद्- 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म'- ईश्वर सत्य है, ज्ञान है, अनंत है। 'य: वेद निहितं गुहायां परमेव्योमन् स: अश्नुते सर्वान् कामान्'- जो हृदयाकाश की गहन-गुहा में उस ब्रह्म को जान लेता है वह सब कामनाओं से तृप्त हो जाता है। 'श्रोत्रियस्य च अकामहतस्य'- जो श्रोत्रिय है और एषणाओं से रहित है वह ही उस महान ब्रह्म के महान आनंद को पा सकता है। आनंद की मात्रा की व्याख्या करते हुए ऋषि कहते हैं पूर्ण विद्वान, बलवान ऐश्वर्यवान् होने से जो आनंद एक मनुष्य को होता है उसे इकाई मान लें तो इससे सौ गुणा आनंद = गंधर्वानंद x 100= देवों का आनंद x 100= पितरों का आनंद 1 x 100= आजानज व्यक्तियों का आनंद 1 x 100= कर्म देवों का आनंद 1 x 100 इन्द्रदेव आनंद 1 x 100= बृहस्पति का आनंद 1 x 100= प्रजापति का आनंद 1 x 100= ब्रह्मानंद। ऐसे आनंद के लिए हम श्रोत्रिय हो, कामनाओं का शिकार न हों और गुरु व शिष्य मिलकर उसकी प्राप्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करें- ओ३म् सह नौ अवतु, सह नौ भुनक्तु, स वीर्यं करवावहै तेजस्वीनावधीतमस्तु मा विद्द्विषावहै ओं शान्ति: शान्ति: शान्ति:।

छान्दोग्य उपनिषद्- इसके तेरह खंडों में ओंकार का भिन्न-भिन्न रूप में वर्णन किया गया है।

एवं एव खु सोम्य, इमा: प्रज्ञा: सत: आगम्य, न विदु: सत: आगच्छामहे इते (6.10.2) हे सोम्य:। जैसे सब नदियां, सागर से ही जाती हैं सब रस फूलों से ही आते हैं। जो यह नहीं जानते वे अज्ञानी हैं। हे श्वेतकेतो! तू वही है- 'तत् त्वम् असि श्वेत केतो' (6.10.3) जो दृश्यमान के पीछे इसे जीवन दे रहा है वही वास्तव में 'सत्' है। तस्मिन यद् अंत: तद् अन्वेष्टव्यम् (8.1.1) उस भूमा को, ब्रह्म को ब्रह्मपुर अर्थात् दहरं पुंडरीकं (कमल जैसे छोटे से घर हृदय देश) में ढूंढ़ना चाहिए।

वृहदारण्यक उपनिषद्- तस्मात् तत् सर्वं अभवत (1.4.10)- यह विशाल जगत उसी से उत्पन्न हुआ है। ब्रह्म वै इदम् अग्र आसीत्- सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्म ही अकेला था। तद् आत्मानम् अवेत्, अहम् ब्रह्म अस्मि- वह अपने को ही जानता था कि मैं ब्रह्म हूं, महान हूं। स: ह उवाच, एतद् वै तद् अक्षरम्- याज्ञवल्क्य गार्गी को कहते हैं कि आकाश जिसमें ओत-प्रोत है उसे ब्रह्म वेत्ता लोग अक्षर कहते हैं।

श्वेताश्वतरोपनिषद्- तस्मिन् त्रयं सुप्रतिष्ठितम् अक्षरं च- उस परम ब्रह्म (आकाश) में ईश्वर, जीव, प्रकृति ये तीनों अक्षर (नष्ट न होने वाले) सुप्रितिष्ठत हैं। अत्र अंतरं ब्रह्मविद: विदित्वा- ब्रह्मवेता तत्परा: योनिमुक्ता:' ब्रह्म में लीन (रम) होकर योनि (जन्म-मरण) के बंधन से मुक्त हो जाते हैं। 'स्व देहं अरणिं कृत्वा प्रणवं च उत्तरारणिं ध्यान निर्मन्थन अभ्यासात्'- अपने देह को नीचे की अरणि और प्रणव को ऊपर की अरणि बनाकर ध्यान की रगड़ के अभ्यास से निगूढ़वत परमात्म देव का दर्शन करे (देवं पश्येत निगूढ़वत) जैसे अरणियों में अग्नि निगूढ़ है वैसे विश्व में परमात्मा निगूढ़ है।

OO

जीवनबोध का पर्व शिवरात्रि

डॉ. महेश विद्यालंकार

शिवरात्रि भारत का धार्मिक सांस्कृतिक और महान प्रेरक पर्व है। इसका संबंध मंगकारी शिव भगवान की पूजा उपासना, व्रत एवं संकल्प भावना से है। सभी धार्मिक आस्था वाले इस पर्व को किसी न किसी रूप में बड़ी श्रद्धा से मनाते हैं। आज जो शिवरात्रि का आध्यात्मिक, सांस्कृतिक तथा लोक में प्रचलित स्वरूप है वह मात्र ब्रह्मा आडम्बर और रस्म रिवाज तक सीमित हो रहा है। सत्य है कि शिवरात्रि आत्मबोध, सत्यबोध तथा जीवनबोध का पर्व है। पर्व जगाने, सम्भालने व दिशाबोध कराने आते हैं। आज पर्वों की मूल चेतना, उद्देश्य, संदेश तता सत्यस्वरूप विकृत हो रहा है। पर्वों से हम जीवन एवं जगत के लिए कुछ प्रेरणा व सीख नहीं ले पा रहे हैं। शिवरात्रि पर्व परमात्मा के सत्य स्वरूप और जीवन लक्ष्य का संदेश देने प्रतिवर्ष आता है। कल्याणकारी शिव जो बोध कराये उससे मिलने की भावना जागृत करें, वही सच्ची शिवरात्रि है। बाकी तो संसारी और भोगरात्रियां और रात्रियां हमें सुलाने आती हैं। शिवरात्रि जगाने और जीवनबोध कराने आती है। यह आत्म बोध का सार्थक पर्व है।

आर्य समाज के जन्म निर्माण और इतिहास में शिवरात्रि की अति आवश्यक भूमिका रही है। संसार की साधारण घटनाएं महापुरुष के जीवन में परिवर्तन, मोड़ और क्रांति ला देती हैं। मूलशंकर के जीवन में शिवरात्रि सत्यबोध और वैचारिक क्रांति लेकर आयी। वे शिवरात्रि की रात जागने के बाद जीवन भर चैन से नहीं सोये। यदि मूलशंकर के जीवन में सच्ची शिवरात्रि न आती तो वे दयानंद न बनते। ऋषि दयानंद न होते तो आर्य समाज न होता। यदि आर्यसमाज न होता तो विस्मृत वैदिक धर्म, वेद, यज्ञ, समाज-सुधार आदि का सत्य स्वरूप कौन दिखता? ऋषि ने अपना सम्पूर्ण जीवन वेदोद्धार, देश, धर्म, मानवता तथा संसार के उपकार के लिए आहुत कर दिया। ऐसा अनोखा निराला विलक्षण सत्य का शोधक, सत्य वक्ता, सत्य का प्रचारक और सत्य पर शहीद होने वाला महापुरुष दुनिया में दूसरा नहीं हुआ है।

ऋषि की विशेषताओं और उपकारों का जितना गुणान किया जाय उतना कम है। सत्य की ऋषि के ज्ञान बोध का पर्व शिवरात्रि हम सब ऋषि भक्तों, आर्य समाजियों, सभा संगठनों, संस्थाओं आदि के अधिकारियों के लिए आत्म-चिंतन, आत्म-विश्लेषण, कर्तव्य-बोध, सत्य-धर्म आदि के चिंतन मनन का अवसर है। क्या खोया? क्या पाया? ऋषि की विचार धारा के प्रचार और प्रसार के लिए हम क्या कर रहे हैं। ऐसे अवसर सोचने, अपने को बदलने व्रत तथा संकल्प के लिए आते हैं।

संसार की सबसे बड़ी मूल्यवान महत्वपूर्ण चीज जीवन है, हम अपने आत्म कल्याण, आत्म उत्थान और जीवन निर्माण के लिए धार्मिक स्थानों, सत्य ग्रंथों एवं महापुरुषों के साथ जुड़ते हैं। यदि हमारे जीवन में सत्य बोध नहीं हुआ, हमने अपने जीवन की बुराईयों, दुर्गुणों, दोषों आदि का दूर नहीं किया, पशुता से देवत्व की प्रवृत्ति नहीं बनायी, जीवन को धार्मिकता, आध्यात्मिकता तथा प्रभु के साथ नहीं जोड़ा तो सत्य है कि हमने शिवरात्रि बहिर्जगत में मनाई है। अंर्तजगत में अंधेरा, अज्ञान, स्वार्थ, अहंकार, पशुता आदि भरी रही तो समझना चाहिए कि हम अपने को धोखे और अंधेरे में रख रहे हैं। इतिहास साक्षी है जो अंदर से जागे हैं, उनके जीवन

बदल गये हैं। जीवन का कायाकल्प हो गया। पतित जीवन तपस्वी बन गये। भोगी, विलासी, दुर्व्यसनी मुंशीराम तपस्वी, त्यागी, बलिदानी स्वामी श्रद्धानंद बन गये। भोग-विलास तथा वासनाओं के कीचड़ में फंसे अमीचंद अमूल्य हीरा बन गये। गुरुदत्त नास्तिक से आस्तिक बन गये।

यह सम्भव तब हुआ जब उनके हृदय में ज्ञान की अग्नि प्रज्वलित हुई। हमारे ज्ञान, विवेक तथा जीवन में परिवर्तन, सुधार व आकर्षण उत्पन्न नहीं हो पा रहा है। मूल में भूल हो रही है। हमारे जीवन नहीं बन पा रहे। जीवन से ही दूसरे के जीवन की ज्योति जलती है। वेद का अमर संदेश है- 'यो जागार तं ऋचा कामयन्ते' जो जागता है उसे ही सत्य ज्ञान तथा आत्म ज्ञान प्राप्त होता है।

शिवरात्रि आत्मज्ञान का पर्व है। सत्य को जानने और खोजने का पर्व है। जड़ पूजा से चेतन पूजा की ओर चलो। बाहर दी दुनिया से अंदर की दुनिया में आओ। उठो! जागो! अपने जीवन तथा जगत को संभालो। जीवन बड़ी तेजी से व्यर्थ की बातों, विवादों, उलझनों और भोगों में गुजरा जा रहा है। मानव जीवन को प्राप्त करने के बाद भी जीवन को उद्देश्यहीन बनाकर जिया तो उपनिषद के शब्दों में महती विनिष्ठ, इससे बढ़कर जीवन की हानि व विनाश और कुछ भी नहीं है। ○○

मुद्राचिकित्सा : आरोग्यकारकमुद्राः

आर्ष गुरुकुल, नोएडा

मुद्राः असङ्ख्याः वर्तन्ते। एतासां प्रयोगः देवि-देवानां पूजोपासनासु, मन्त्र-तन्त्रेषु, धार्मिकाऽनुष्ठानेषु, नृत्ययोगसाधनादिषु च भवति। परन्तु अत्र ताः एव मुद्राः प्रदर्श्यन्ते प्रकाशिताः वा क्रियन्ते याः मानवस्य शारीरक-मानसिकदोषान् दूरीकृत्य तस्य शारीरक-मानसिकाध्यात्मिक-विकासे सहायकाः भवितुं शक्नुयुः यासां च साहाय्येन मानवः रोगाणां चिकित्सां कर्तुं शक्नुयात्।

प्रमुखारोग्यकारक-मुद्राणां नामानि निम्नलिखितानि सन्ति-

1. ज्ञानमुद्रा, 2. वायुमुद्रा, 3. आकाशमुद्रा, 4. शून्यमुद्रा, 5. पृथ्वीमुद्रा, 6. सूर्यमुद्रा, 7. वरुणमुद्रा, 8. जलोदरनाशकमुद्रा, 9. अपानमुद्रा, 10. प्राणमुद्रा, 11. शंङ्खमुद्रा 12. सहजशंङ्खमुद्रा, 13. अपानवायुमुद्रा, 14. लिङ्गमुद्रा, 15. ध्यानमुद्रा चेति।

मुद्राकरणस्य सामान्यनियमाः : उपर्युक्तमुद्राः आरोग्यदृष्ट्या अत्यन्तप्रभावशालिन्यो वर्तन्ते। एताः स्त्रियः, पुरुषाः, बालकाः, वृद्धाश्च सर्वे कस्यामपि अवस्थायां कस्मिन्नपि समये कर्तुं शक्नुवन्ति। अस्य कार्यस्य कृते उपासनासाधनादिक-समये क्रियमाणां मुद्राणामिव आसनविशेष-मञ्च-दिक्-समयादीनां विवशता न भवति। एताः मुद्राः गमना-गमनसमये, शयन-जागरणसमये, यात्रासमये, दूरदर्शनादीनां दर्शनसमये, वार्तालापकरणसमये, सांसारिककार्यकरणसमये अथवा यदा अभिलाषा जायते तदा कर्तुं शक्यन्ते।

एतासां मुद्राणां सामान्यनियमाः निम्नलिखिताः सन्ति-

1. मुद्राः उभाभ्यां हस्ताभ्यां कर्त्तव्याः। एकेन हस्तेन अपि करणेन लाभो भवति यथा- ध्यानमुद्रा। वामहस्तेन या मुद्रा विधीयते तया शरीरस्य दक्षिणाङ्गानि प्रभावितानि भवन्ति। दक्षिणेन हस्तेन च या मुद्रा क्रियते तया शरीरस्य वामाङ्गानि प्रभावितानि भवन्ति।

2. मुद्रायाम् अङ्गुलीनां स्पर्शनसमये नोदनम् अल्पं स्वाभाविकं च भवितव्यम्। अवशिष्टाः अङ्गुल्यः पूर्णशक्त्या ताननाऽपेक्षया सहजभावेन स्थापनीयाः। मुद्रासु अङ्गुलीनां स्पर्शः अधिकः महत्वपूर्णः वर्तते। अवशिष्टाऽङ्गुलीनां सुविधाऽनुकूलस्थापनेन अपि लाभः भवति।

3. कस्याश्चिदपि मुद्रायाः अभ्यासः दिवसे अन्यूनं 45 कलाः पर्यन्तम् उभाभ्यां कर्त्तव्यः। एतत् मुख्यतया साधकाय आवश्यकम्। एतया 45 कलात्मिकया साधनया शारीरिकतत्त्वेषु वर्धनक्रमे परिवर्तनं भवति।

सामान्यमानवः एतासां मुद्राणाम् अभ्यासं प्रारम्भे 10 कलात्मकसमयात् आरभ्य अधिकाधिकं 1 होरात्मकसमयपर्यन्तं वर्धितुं शक्नोति।

सुकरो विधिः यदि कश्चन मनुष्यः प्रतिदिनं 45 कलात्मकसमये एकां मुद्रां कर्तुं क्लेशम् अनुभवेत् तर्हि सः तां मुद्रां प्रतिदिनं सायं प्रातः 15-15 कलात्मकसमयेन नियमितरूपेण कुर्यात्। अनेन विधिना अपि वाञ्छितफलं प्राप्तुं शक्यते। परन्तु फलप्राप्तौ किञ्चिद् विलम्बः भवितुं शक्नोति। श्रद्धया मुद्राभ्यासकरणात् अवश्यमेव रोगस्य निवृत्तिः भविष्यति। रोगिणश्चेत् स्वस्थाः भविष्यन्ति, सामान्यस्वस्थाश्चेत् ततोऽपि अधिकस्वस्थाः भविष्यन्ति।

रोगदशायाम् : रुग्णाऽवस्थायां संवेशनोपवेशनस्थितौ अथवा अन्यस्यां कस्यामपि स्थितौ तत् रोगसम्बन्धितमुद्रायाः तत्कालमेव प्रयोगः कर्तुं शक्यते। यद्यपि कस्यचिद् रोगविषेशस्य कृते विशिष्टमुद्रायाः समयः 45 तः 50 कलापर्यन्तं वर्तते, परन्तु तथाऽपि आवश्यकतायाः अथवा सामर्थ्याऽनुसारं सा मुद्रा न्यूनाधिककालपर्यन्तमपि कर्तुं शक्यते। रोगः यावान् पुरातनः भवति तन्निवृत्तिः अपि तावता एव अधिकेन समयेन भवति। पुनरपि एकं क्षणमपि कृतः मुद्राभ्यासः अस्माकं शरीराऽभ्यन्तरं सूक्ष्माऽतिसूक्ष्मस्नायुमण्डलस्य केन्द्रेषु महत्त्वपूर्णयौगिकचक्रेषु च अद्भुतप्रभावपूर्णं कम्पनोत्पादने सहायकः सिद्धः भवति। काश्चन मुद्राः रोगनिवृत्तिपर्यन्तमेव कर्तव्याः, यथा- शून्यमुद्रा वायुमुद्रा चेति। रोगनिवृत्तेः अनन्तरम् अधिकसमयं यावत् एतासां नियमिताभ्यासेन हानेः सम्भावनापि भवितुं शक्नोति। काश्चन मुद्राः स्वेच्छानुसारम् अधिकाधिकसमयं यावत् करणेन लाभो भवति, यथा- प्राणमुद्रा, ज्ञानमुद्रा, अपानमुद्रा, पृथ्विमुद्रा चेति।

मुद्राणां प्रभाव : कासाञ्चिद् मुद्राणां लाभः तत्कालमेव भवति, यथा- शून्यमुद्रा एवं च अपानमुद्रा। काश्चनमुद्राः दीर्घकालीनाः सन्ति याः दीर्घकालीनाभ्यासानन्तरं स्वस्थायिप्रभावं प्रकटयन्ति। ज्ञानापानपृथ्विप्राणमुद्राणां यावान् अधिकः अभ्यासः करिष्यते तावानेव हितकरः प्रभावः भविष्यति। विशेषतः प्राणमुद्रायाः अभ्यासः सर्वेषां स्वस्थाऽस्वस्थमानवानां कृते लाभप्रदः वर्तते।

अन्योपचारैः सार्धम्- एताः मुद्राः अन्योपचारेण सार्धमपि कर्तुं शक्यन्ते। मुद्राभिः चिकित्सा कस्यचिदपि विधस्य उपचारे कामपि बाधां न करोति, अपितु रोगं शीघ्रं दूरीकर्तुं सहायिका भवति। औषधान्तरं स्वीकुर्वन् रोगी यदि श्रद्धया मुद्राचिकित्सायाः अभ्यासमपि कुर्यात् तर्हि शीघ्रं लाभः भविष्यति। यदि मुद्राप्रयोगे विश्वासः अपि नास्ति चेदपि मुद्रा स्वकीयकार्यम् अवश्यमेव करिष्यति। ○○

आर्य समाज का दशम नियम...

विजय बिहारी लाल माथुर

आर्य समाज के दशवें व अंतिम नियम में दिए गए निर्देश को पिछले सभी नियमों के संदर्भ में लेना चाहिए। नवम नियम में आदेश है कि अपनी उन्नति करने का पूर्ण प्रयत्न करते हुए भी केवल अपनी उन्नति से ही संतुष्ट न रहकर सबकी उन्नति के लिए भी प्रयत्नशील रहना चाहिए तथा सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। इस संदर्भ में हम दशम नियम पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि सबकी उन्नति हेतु सब व्यक्ति प्रयत्न करेंगे तो अपनी उन्नति तथा सबकी उन्नति में संघर्ष के बिंदु आ सकते हैं। उस संघर्ष को बचाने की दृष्टि से दशम नियम में यह आदेश है कि जहां तक ऐसे कार्य व नियम हैं जिनका संबंध पूर्णरूपेण व्यक्तिगत उन्नति, जीवनचर्या, कार्यकलाप, प्रवृत्तियों से है वहां व्यक्ति को अपनी रुचि, इच्छा व चयन के द्वारा कार्य करते हुए अपने को स्वतंत्र रखने का विधान किया है, परंतु जहां ऐसे कार्य व नियम हैं जिनका संबंध व्यक्ति से बढ़कर समाज की उन्नति, सामाजिक व्यवहार, सामाजिक संगठन एवं समाज के विभिन्न व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों से है, वहां व्यक्ति की स्वतंत्रता पर समाजहित के नियंत्रण का अंकुश लगाया गया है।

मानव प्रकृति एवं सामाजिक बंधन : मनुष्य सामान्यतया प्राकृतिक मूल प्रवृत्तियों की प्रेरणा से सदा बंधनरहित स्वतंत्र ही नहीं स्वेच्छाकारी रहना चाहता है। अपनी इच्छा-अनिच्छा व पसंद-नापसंद को मनमाने तरीके से स्वसामर्थ्य व स्वसाधनों को उपयोग में लेकर अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति करना चाहता है। परंतु यदि मानव को यह स्वतंत्रता सब कार्यों के लिए दे दी जाए तथा सारे नियम-नियंत्रण के बंधन शिथिल कर दिए जाएं तो वास्तव में मनुष्य पशु से भी भिन्न कोटि का प्राणी रह जाएगा तथा जंगल राज तो जंगल के पशुओं में पाया जाता है और भी भयंकर रूप से मानव में पाया जाएगा- मानव अपने सारे ज्ञान-जन्य गुण एवं बुद्धि, उन्नति को समाप्त कर अस्तित्व के अतीव निकृष्ट धरातल पर पहुंच जाएगा।

परिवार एवं समाज : समाज मे लघुरूप परिवार को ही देखिए। नवजात शिशु आयु की मास एवं वर्ष की सीढ़ियां पार करता हुआ किशोर व युवावस्था की देहलीज पर पहुंचता है। प्रत्येक स्तर पर पिता एवं परिवारजन जब देखते हैं कि बालक की कोई चेष्टा या क्रिया उचित नहीं है तो समझा-बुझाकर तथा आत्यावश्यक हो तो दंड देकर भी उसे रोकते हैं तथा परिवार की परंपरा मर्यादा के अनुसार उसको आचरण एवं व्यवहार में ढालते हैं। यही स्थिति बालक के नागरिक के रूप में विकसित होने पर व्यक्ति एवं समाज के बीच स्थापित होती है। समाज की परंपरा, मर्यादा, संस्कृति, नियम, विधि-विधान सबकी परिधि के बीच नागरिक रहता है। इन मर्यादा एवं विधि के उल्लंघन पर उसे न केवल प्रताड़ना हेतु समाज उपस्थित रहता है, वरन् समाज की अन्य व्यवस्थाओं यथा पुलिस, अदालत, न्यायपालिका एवं कार्यपालिका समाज के नियम व व्यवस्था हेतु तत्परता से कार्य करती व व्यक्ति पर नियंत्रण रखती है। यह सारी व्यवस्था समाज हितकारी नियमों के पालन हेतु नागरकि को परतंत्र बनाती है। नियम में यह निर्देश दिया है कि सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिए। यह निर्देश तो एक प्रकार से सभ्य, सुसंस्कृत व्यक्तियों को स्वेच्छा से ही अपने पर समाज विरोधी कार्य न करने का प्रतिबंध लगाने की प्रेरणा है, अन्यथा नागरिकों को समाज हितकारी नियम पालन करने एवं समाज विरोधी कार्य न करने में परतंत्र रखने की समाज की, स्वयं की न्यायपालिका एवं कार्यपालिका की व्यवस्था है ही। यह नियम उन व्यवस्थाओं का उल्लंघन कर अनाचारी, हिंसक, चोर आदि बनने की प्रवत्तियों पर विशेष रूप से अंकुश लगाता है।

व्यक्ति के हित में समाज : मानव सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर परस्पर विचारों, ज्ञान, आविष्कार, आमोद-प्रमोद, जीवनोपयोगी वस्तुओं एवं सेवाओं के आदान-प्रदान से प्रत्येक व्यक्ति का जीवन इतना सुखी हो सका है, जितना आज है। एक व्यक्ति केवल एक वस्तु का उत्पादन या केवल एक प्रकार की सेवा करता है तथा अपनी व अपने परिवार की अन्य सभी आवश्यकताओं, संबंधों, उत्पादनों एवं सेवा हेतु वह समाज के अन्य व्यक्तियों ही नहीं, संसार के अन्य देशों के नागरिकों पर भी निर्भर रहता है। कल्पना कीजिए कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी व अपने परिवार की सभी आवश्यकताओं से संबंधित उत्पादन एवं सेवाएं स्वयं करनी पड़ें तो क्या उसका जीवन दूभर एवं असंभव नहीं हो जाएगा। प्रत्येक समाज के नागरिक एवं संसार के सारे देश आज इतने अधिक अन्याऽन्याश्रित हैं जितने इतिहास के किसी देश या काल में नहीं रहे, अतः आज यह और भी अधिक आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहे।

प्रत्येक देश-काल के समाज की कतिपय मान्यताएं होती हैं। उस समाज के साहित्य, विधि-निषेध, रीति-रिवाज, सामाजिक आचार-व्यवहार, रहन-सहन व सभी सामाजिक

मानव सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर परस्पर विचारों, ज्ञान, आविष्कार, आमोद-प्रमोद, जीवनोपयोगी वस्तुओं एवं सेवाओं के आदान-प्रदान से प्रत्येक व्यक्ति का जीवन इतना सुखी हो सका है, जितना आज है। एक व्यक्ति केवल एक वस्तु का उत्पादन या केवल एक प्रकार की सेवा करता है तथा अपनी व अपने परिवार की अन्य सभी आवश्यकताओं संबंधों उत्पादनों एवं सेवा हेतु वह समाज के अन्य व्यक्तियों ही नहीं, संसार के अन्य देशों के नागरिकों पर भी निर्भर रहता है। कल्पना कीजिए कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी व अपने परिवार की सभी आवश्यकताओं से संबंधित उत्पादन एवं सेवाएं स्वयं करनी पड़ें तो क्या उसका जीवन दूभर एवं असंभव नहीं हो जाएगा। प्रत्येक समाज के नागरिक एवं संसार के सारे देश आज इतने अधिक अन्याऽन्याश्रित हैं जितने इतिहास के किसी देश या काल में नहीं रहे, अतः आज यह और भी अधिक आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहे। प्रत्येक देश-काल के समाज की कतिपय मान्यताएं होती हैं। उस समाज के साहित्य, विधि-निषेध, रीति-रिवाज, सामाजिक आचार-व्यवहार, रहन-सहन व सभी सामाजिक विशेषताओं को मिलाकर 'संस्कृति' नाम दिया गया है।

विशेषताओं को मिलाकर 'संस्कृति' नाम दिया गया है। देश-काल के समाज की यह संस्कृति समाज की प्रत्येक पीढ़ी द्वारा नवीन पीढ़ी को विरासत में सौंपी जाती है तथा प्रत्येक पीढ़ी का यह और उत्तरदायित्व पूर्ण प्रयत्न होता है कि उसकी नवीन पीढ़ी उस समाज की सांस्कृतिक धरोहर को मान्य करके जीवन में उसे क्रियान्वित करें। सामाजिक ढांचे की मान्यताओं एवं संस्कृति के अनुपालन में ही सामान्यजन की रुचि और आग्रह होते हैं।

सामाजिक क्रांति : परंतु समय-समय पर ऐसे क्रांतिकारी युग पुरुष उत्पन्न होते हैं जो समाज की विकृत मान्यताओं की धारा के प्रवाह में बहने से इंकार कर देते हैं तथा उस धारा को नवीन दिशा प्रदान कर उसकी कुरीतियों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों एवं ढकोसलों से पूर्ण परम्पराओं में वैचारिक एवं क्रियात्मक क्रांति से सुधार एवं परिमार्जन का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस प्रकार के महामानवों के प्रयत्न स्वरूप तथा कालक्षेप के कारण भी सामाजिक भावनाओं में परिवर्तन होते रहते हैं।

सामाजिक नियमों के बंधन : दशम नियम सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालन में परतंत्रता का बंधन सामान्य जन-जन के लिए इसलिए भी निर्दिष्ट है कि सामाजिक परिवर्तन व सुधार के नाम पर उच्छृंखलता, सामाजिक अराजकता व अव्यवस्था न हो जाए। व्यक्ति को प्रत्येक स्वहितकारी नियम के पालन में जो स्वतंत्रता प्रदान की गई है सामाजिक हित की परतंत्रता के आलोक में उसकी भी मुख्य लक्ष्य यही है कि व्यक्ति अपने निजी कार्यों में भी समाज का ध्यान रखे तथा उसका कोई व्यक्तिगत कार्य अन्य व्यक्तियों के हित के विरुद्ध न होवे। आज नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों का भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् चालीस वर्षोंमें जो अवमूल्यन ह्रास हुआ है तथा भौतिकवाद ने जो अपना भयंकर प्रभाव स्वतंत्र भारत की नवोदित पीढ़ी पर डाला है वह बड़ा चिंताजनक है। आज उद्देश्य मुख्य है, उद्देश्य प्राप्ति के साधनों की पवित्रता पर कोई ध्यान नहीं देता है। इसी भावना का परिणाम है कि उचित-अनुचित साधनों का ध्यान रखे बिना विद्यार्थी परीक्षा पास कर डिग्री लेना चाहता है।

व्यापारी, तस्करी, मिलावट कर चोरी आदि साधनों से धनी बनना चाहता है। पुलिस का सिपाही, दफ्तर का बाबू, स्कूल का अध्यापक, चिकित्सालय का डाक्टर, अदालत का बाबू, वकील व्यापारी, उद्योगपति सभी के सामने केवल जल्दी किसी भी प्रकार लखपति, करोड़पति अरबपति, बनने के लिए दीवाना है। यह सब प्रत्येक हितकारी कार्य, सामाजिक हित के मूल्यों के बलिदान पर किए जाते हैं।

मूल्यों के इस अवमूल्यन एवं ह्रास के युग में आर्यसमाज का दशम नियम एक प्रेरणा एवं दिशा निर्देश देता है। यह उस महर्षि दयानन्द की भावना की ज्योति को आलोकित करते हुए आर्यजनों से अपेक्षा करता है कि हम महर्षि के बताए मार्ग पर उनके निर्धारित नियमों की जीवन में यथार्थरूप से क्रियान्विति के द्वारा उनके ऋण से अनृण हो सकें, उनके सच्चे योग्य अनुयायी बन सकें और अपने-अपने समाज व प्राणिमात्र का कल्याण कर सकें। प्रभु दया करें और ज्ञान, श्रद्धा, दृढ़ता, निष्ठा एवं क्षमता प्रदान करें कि हम जीवन में आर्यसमाज के दशों नियमों का पालन करते हुए सच्चे अर्थों में आर्य बनें व अन्यों को आर्य बना सकें।

'यदि मानव के समस्त बंधन शिथिल कर दिए जाएं तो वह पशु से भी निम्न कोटि का प्राणी रह जाएगा। अतः समाज के कार्यों में हमें सामाजिक नियमों में बंधकर ही रहना चाहिए।'

OO

पं. रामचन्द्र देहलवी शास्त्रार्थ महारथी

स्मृति : 3 फरवरी
शत्-शत् नमन

आर्य समाज के विद्वान पंडित रामचन्द्र देहलवी पुरानी दिल्ली के फव्वारे पर खुलेआम विद्वानों से शास्त्रार्थ किया करते थे। हमारे दुर्भाग्य से या सौभाग्य से भारत में कई मतावलम्बी हैं। उनमें मुख्य रूप से ईसाई, मुसलमान, आर्यसमाजी व सनातनधर्मी हैं। बाकी और जो हैं उनकी इतनी मुख्यता नहीं है। मुसलमानों का, खुदा की इबादत करने का अपना एक तरीका है। ईसाइयों व मुसलमानों में कोई विशेष भेद नहीं है, थोड़ा ही भेद है इसलिए मैं उन्हें मुसलमानों से जुदा नहीं करता हूं। सनातन धर्म और आर्यसमाज में भी कोई फर्क नहीं है। हम चाहते हैं कि जो थोड़ा सा भेद उनमें और हममें है वह न रहे। उनको खास तौर से इस मजमून में शामिल कर लिया है। आर्य जगत में पंडित रामचंद्र जी देहलवी गजब के तार्किक थे उन्होंने सभी मजहब के लोगों के साथ शास्त्रार्थ किये और सभी को अपने तार्किक शक्ति से पछाड़ा- एक शास्त्रार्थ में मौलाना सनाउल्ला ने कहा-पंडित जी जहां से आपके राम खत्म होते हैं, वहीं से हमारे मुहम्मद साहब शुरू होते हैं इसलिए अब आप को राम का नाम छोड़कर मुहम्मद का जाप करना चाहिए। देहलवी जी बोले- शाबास मौलाना साहब शाबास! मरहबा!! किन्तु मौलाना साहब आप बीच में ही क्यों रुक गए- आगे भी कहो। मौलाना बोले-आगे क्या है यह आप ही कह दीजिए। पंडित जी बोले- जहां आपके मोहम्मद साहब समाप्त होते हैं, वहीं से दयानंद शुरू हो जाते हैं, इसलिए मुहम्मद साहब को छोड़ कर दयानंद के गीत गाओ।

स्वामी श्रद्धानन्द

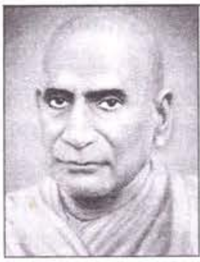

जन्म : 13 फरवरी
शत्-शत् नमन

स्वामी श्रद्धानन्द का जन्म पंजाब प्रांत के जालंधर जिले के तलवान ग्राम में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उनके पिता, लाला नानक चंद, ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा शासित यूनाइटेड प्रोविंस में पुलिस अधिकारी थे। उनके बचपन का नाम वृहस्पति और मुंशीराम था, किंतु मुंशीराम सरल होने के कारण अधिक प्रचलित हुआ। पिता का ट्रांसफर अलग-अलग स्थानों पर होने के कारण उनकी आरम्भिक शिक्षा अच्छी प्रकार नहीं हो सकी। लाहौर और जालंधर उनके मुख्य कार्यस्थल रहे। एक बार आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती वैदिक-धर्म के प्रचारार्थ बरेली पहुंचे। पुलिस अधिकारी नानकचंद अपने पुत्र मुंशीराम को साथ लेकर स्वामी दयानन्द का प्रवचन सुनने पहुंचे। युवावस्था तक मुंशीराम ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं करते थे। लेकिन स्वामी दयानन्द जी के तर्कों और आशीर्वाद ने मुंशीराम को दृढ़ ईश्वर विश्वासी तथा वैदिक धर्म का अनन्य भक्त बना दिया। वे एक सफल वकील बने तथा काफी नाम और प्रसिद्धि प्राप्त की। आर्य समाज में वे बहुत ही सक्रिय रहते थे। गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक थे। वे शुद्धि आंदोलन के प्रणेता थे। 23 दिसम्बर को उन पर वार कर दिया जिससे वह शहीद हो गए।

पं. चमूपति एम.ए.

जन्म : 15 फरवरी
शत्-शत् नमन

पंडित चमूपति का जन्म 15 फरवरी, 1863 ई. में बहावलपुर (अब पाकिस्तान) में हुआ था। इनके पिता का नाम मेहता बसंदा राम था। बालक का नाम उन्होंने चम्पतराय रखा था। पं. चमूपति जी ने मिडिल परीक्षा में अपनी रियासत में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया था। मैट्रिक की परीक्षा पास करके वे बहावलपुर के सादिक ईजर्टन कॉलेज में प्रविष्ट हो गए। कॉलेज में उन्होंने उर्दू काव्य लिखना आरम्भ कर दिया। सर्वप्रथम उन्होंने सिखों के धर्मग्रंथ 'जपजी' का उर्दू में काव्यानुवाद किया। एमए की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने पर आप उसी रियासत के एक मिडिल स्कूल में अध्यापक नियुक्त हो गये। मेहता चम्पतराय के विचारों में एमए करने के उपरांत भी स्थिरता नहीं आ पाई थी। प्रारंभ में वे सिख धर्म की ओर आकृष्ट हुए तो फिर शनैः शनैः नास्तिक बन गये। इसी बीच उन्हें स्वामी दयानंद के ग्रंथों के अध्ययन का सुयोग सुलभ हुआ। परिणाम स्वरूप ईश्वर के प्रति उनकी आस्था तो जम गई किंतु वे शंकर वेदांत की ओर झुकने लगे। 15 जून 1939 को उनका स्वर्गवास हो गया। अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया। वेदों का भाष्य किया, वेद की रचना की, पं. चमूपति असाधारण कोटि के विद्वान थे। हिंदू, उर्दू, और अंग्रेजी इन तीनों विषयों पर उनका समान अधिकार था।

रक्त साक्षी पं. लेखराम

जयंती : 17 फरवरी
शत्-शत् नमन

आर्य मुसाफिर पं. लेखराम का जन्म 8 चैत्र, संवत् 1915 (1858 ई.) को झेलम जिला के तहसील चकवाल के सैदपुर गांव (अब पाकिस्तान में) में हुआ था। उनके पूर्वज महाराजा रणजीत सिंह की फौज में। उनके पिता का नाम तारा सिंह एवं माता का नाम भाग भरी था। उन्होंने आरंभ में उर्दू-फारसी पढ़ी। बचपन से ही स्वाभिमानी और दृढ विचारों के थे। एक बार उनको पाठशाला में प्यास लगी, मौलवी से घर जाकर पानी पीने की इजाजत मांगी। मौलवी ने जूठे मटके से पानी पीने को कहां। उसने न दोबारा मौलवी से घर जाने की इजाजत मांगी और न ही जूठा पानी पिया। सारा दिन प्यासा ही बिता दिया। मुंशी कन्हैयालाल अलाख्धारी की पुस्तकों से उनको स्वामी दयानंद सरस्वती का पता चला। लेखराम जी ने ऋषि दयानंद के सभी ग्रंथों का स्वाध्याय आरंभ कर दिया। सत्रह वर्ष की उम्र में वे सन् 1875 में पेशावर पुलिस में भरती हुए और उन्नति करके सारजेंट बन गए। इन दिनों इन पर 'गीता' का बड़ा प्रभाव था। दयानंद सरस्वती से प्रभावित होकर उन्होंने 1937 में पेशावर में आर्यसमाज की स्थापना की। 17 मई सन् 1880 को उन्होंने अजमेर में स्वामी जी से भेंट की। शंका समाधान के परिणामस्वरूप वे उनके अनन्य भक्त बन गए। लेखराम जी ने सन् 1884 में पुलिस की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। अब उनका सारा समय वैदिक धर्मप्रचार में लगने लगा। स्वामी दयानन्द पर उन द्वारा जीवनवृत्त पढ़ने योग्य है। उसी दौरान उन पर वार किया गया था।

वीर सावरकर

स्मृतिः 26 फरवरी
शत्-शत् नमन

वीर सावरकर का जन्म भारत के महाराष्ट्र राज्य के नाशिक जिले के भांगुर गांव में हुआ था इनके पिता का नाम दामोदर पंत सावरकर और माता का नाम राधाबाई था जब वीर सावरकर महज 9 साल के ही थे तो इनकी माता का हैजे की बीमारी से देहांत हो गया था और फिर माता की मृत्यु के पश्चात 7 साल बाद प्लेग जैसी भयंकर बीमारी के फैलने के कारण इनके पिता भी इस दुनिया को छोड़कर चले गये फिर इनका लालन पालन इनके बड़े भाई गणेश और नारायण दामोदर सावरकर तथा बहन नैनाबाई के देखरेख में हुआ। बचपन से वीर सावरकर पढ़ने-लिखने में तेज थे जिसके चलते आर्थिक तंगी के बावजूद इनके भाई ने इन्हें पढ़ने के लिए स्कूल भेजा फिर इसके पश्चात 1901 में वीर सावरकर ने शिवाजी हाईस्कूल से नासिक से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण किया बचपन से ही लिखने का शौक रखने वाले वीर सावरकर ने अपने पढ़ाई के दौरान कविताएं भी लिखना शुरू कर दिया था। इसके पश्चात इनका विवाह 1901 में ही यमुनाबाई के साथ हुआ जिसके बाद इनके आगे की पढ़ाई का खर्च की जिम्मेदारी इनके ससुर ने उठाया। वीर सावरकर ने पहली बार 1905 में दशहरा के दिन विदेशी कपड़ों की होली चलायी जो की एक तरह से पूरे देश में अंग्रेजी वस्तुओं के विरोध की आग पूरे देश में फ़ैल गयी।

क्रांतिकारी योद्धा चंद्रशेखर आजाद

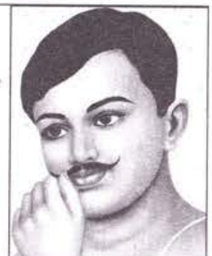

बलिदान : 27 फरवरी
शत्-शत् नमन

क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद का जन्म 23 जुलाई 1906 को उन्नाव, उत्तर प्रदेश में हुआ था। आजाद का वास्तविक नाम चन्द्रशेखर सीताराम तिवारी था। चन्द्रशेखर आजाद का निधन 1931 में फरवरी के अंतिम सप्ताह में जब आजाद गणेश शंकर विद्यार्थी से मिलने सीतापुर जेल गए तो विद्यार्थी ने उन्हें इलाहाबाद जाकर जवाहर लाल नेहरू से मिलने को कहा, चंद्रशेखर आजाद जब नेहरू से मिलने आनंद भवन गए तो उन्होंने चंद्रशेखर की बात सुनने से भी इन्कार कर दिया। गुस्से में वहां से निकलकर चंद्रशेखर आजाद अपने साथी सुखदेव राज के साथ एल्फ्रेड पार्क चले गये। वे सुखदेव के साथ आगामी योजनाओं के विषय में बात ही कर रहे थे कि पुलिस ने उन्हें घेर लिया, लेकिन उन्होंने बिना सोचे अपनी जेब से पिस्तौल निकालकर गोलियां दागनी शुरू कर दी। दोनों ओर से गोलीबारी हुई। जब चंद्रशेखर के पास मात्र एक ही गोली रह गई तो उन्हें पुलिस का सामना करना मुश्किल लगा। चंद्रशेखर आजाद ने पहले ही प्रण किया था कि वह कभी भी जिंदा पुलिस के हाथ नहीं आएंगे। इसी प्रण को निभाते हुए उन्होंने वह बची हुई गोली खुद को मार ली। जिस पार्क में उनका निधन हुआ था उसका नाम परिवर्तित कर 'चंद्रशेखर आजाद पार्क' और मध्य प्रदेश में जिस गांव में वह रहे थे उसका धिमारपुर नाम बदलकर आजादपुरा रखा गया।

The Myth of the Aryan Invansion of India

By: David Frawley (Rest on the Old edition)

Vedic and late Vedic texts also contain interesting astronomical lore. The Vedic calendar was based upon astronomical sightings of the equinoxes and solstices.

The Vedic people were thought to have been a fair-skinned race like the Europeans owing to the Vedic idea of a war between light and darkness, and the Vedic people being presented as children of light or children of the sun. yet this idea of war between light and darkness exists in most ancient cultures, including the Persian and the Egyptian. Why don't we interpret their scripture as a war between light and darkskinned people? It is purely a poetic metaphor, not a cultural statement. Moreover, no real traces of such a race are found in India. Anthropologists have observed that the present population of Gujarat is composed of more or less the same ethnic groups as are noticed at Lothal on 2000BC. Similarly, the present population of the Punjab is said to be ethnically the same as the population of Harappa and Rupar four thousand years ago. Linguistically the present day population of Gujarat and Punjab belongs to the Indo-Aryan language speaking group. The only inference that can be drawn from the anthropological and linguistic evidences adduced above is that the Harappan population in the Indus Valley and Gujarat in 2000BC was composed of two or more groups, the more dominant among then having very close ethnic affinities with the present day Indo-Aryan speaking population of India.

In other words there is no racial evidence of any such Indo-Aryan invasion of India but only of a continuity if the same group of people who traditionally considered themselves to be Aryan. There are many points in fact that prove the Vedic nature of the Indus Valley culture. Further excavation has shown that the great majority of the sites of the Indus Valley culture were east, not west of Indus. In fact, the largest concentration if sites appear in an area of Punjab and Rajasthan near the dry banks of the ancient Saraswati and Drishadvati rivers. The Vedic culture was said to have been founded by the sage Manu between the banks of the Saraswati and Drishadvati rivers. The Saraswati is landed as the main river (naditama) in the Rig Veda and is the most frequently mentioned in the text. It is said to be Great flood and to to be wide even endless in size. Saraswati is said to be "pure in her course from the mountains to the sea." Hence the Vedic people were well acquainted with this river and regarded it as their immemorial homeland.

The Saraswati, as modern land studies now reveal, was indeed one of the largest, if not the largest river in India. In early ancient and pre-historic times, it once drained the Sutlej, Yamuna and the Ganges, whose courses were much different than they are today. However, the Saraswati river went dry by the end of the Indus Valley culture and before the so-called Aryan invasion or before 1500BC. In fact this may have caused the ending of the Indus culture. How could the Vedic Aryans know of this river and establish their culture on its banks if it dried up before they arrived? Indeed the Saraswati as described in the Rig Veda appears to more accurately show it as it was prior to the Indus Valley culture as in the Indus era it was already in decline.

Vedic and late Vedic texts also contain interesting astronomical lore. The Vedic calendar was based upon astronomical sightings of the equinoxes and solstices. Such texts as Vedanga Jyotish speak of a time when the vernal equinox was in the middle of the Nakshatra aslesha (or about 23degree 20 minute cancer). This gives a date of 1300BC. Many Brahamanas, and the Yajur and Arthva Vedas speak of the vernal equinox in the krittikas

(Pleiades; early Taurus)and the summer solstice (ayana) in megha (early Leo.) This gives a date of about 2400BC. Yet earlier eras are mentioned but these two have numerous reference to substantiate them. They prove that the Vedic culture existed at these periods and already had a sophisticated system of astronomy. Such references were merely ignores or pronounced untelligible by western scholars because they yielded to early a date for the Vedas than what they presumed, not because such references did not exist. Vedic texts like Shatapatha Brahmana and Aitereya Bhramana of eleven Vedic kings, including a number of figures of the Rig Veda, said to have conquered the region of India from "sea to sea." Lands of the Aryans and mentioned in them from Gandhara (Afghanistan)in the west to Videha(Nepal) in the east, and south to Vidharbha(Maharashtra). Hence the Vedic people were in these regions by the Krittika equinox or before 2400BC. These passages were also ignored bt western scholars, and it was said by them that the Vedas had no evidence of large empires in India in Vedic times. Hence a pattern of ignoring literary evidence or misinterpreting them to suit the Aryan invasion idea became prevalent, even to the point of charging the meaning of Vedic words to suit this theory.

According to this theory, the Vedic people were nomads in the Punjab, coming down from Central Asia. However, the Rig Veda itself has nearly a hundred references to ocean (samudra), as well as dozens of references to ships, and to rivers flowing into the sea. Vedic ancestors like Manu, Turvasha, Yadu and Bhujyu are flood figures, saved from across the sea. The Vedic God of the sea, Varuna, is the father of many Vedic seers and see families like Vasishta, Agastya and the Bhrigu seers. To preserve the Aryan invasion idea it was assumed that the Vedic (and later Sanskrit)term for ocean, samudra, originally did not mean the ocean but any large body of water, especially the Indus river in the Punjab. Here the clear meaning of a term in the Rig Veda and later times-verified by rivers like Saraswati mentioned by name as flowing into the sea-was altered to make the Aryan invasion theory fit. Yet if we look at the index to translation of the Rig Veda by Griffith for example, who held to this idea that samudra did not really mean the ocean, we find seventy references to ocean or sea. If samudra does not mean ocean why was it still translated as such? It is therefore without basis to locate Vedic kings in Central Asia far from any ocean or from the massive saraswati river, which form the background of their land and the symbolism of their hymns.

One of the latest archeological ideas is that the Vedic culture is evidenced by Painted Grey Ware pottery in north India, which appears to date around 1000BC and comes from the same region between the Ganges and Yamuna as later Vedic culture is related to. It is thought to be an inferior grade of pottery and to be associated with the use of iron that the Vedas are thought to mention. However, it is associated with a pig and rice culture, not the cow and barley culture of the Vedas. Moreover it is now found to be an organic development of indigenous pottery, not an introduction of invaders. Painted Grey Ware culture represents an indigenous cultural development and does not reflect any cultural intrusion from the West that is, an Indo-Aryan invasion. Therefore, there is no archeological evidence corroborating the fact of an Indo-Aryan invasion. In addition, the Aryan in the middle East, most notably the Hittites, have now been found to have been in that region at least as early as 2200 BC, wherein they are already mentioned. Hence the idea of an Aryan invasion into the Middle East has been pushed back some centuries, though the evidence so far is that the people of the mountains regions of the Middle East were Indo-Europeans as far as recorded history can prove.

The Aryan Kassites of the ancient Middle East worshiped Vedic Gods like Surya an the Maruts, as well as one named Himalaya. The Aryan Hittites and Mittani signed a treaty wise the name od the Vedic Gods Indra, Mitra Varuna and Nasatyas around 1400BC. The Hittites have a treatise on chariot racing written in almost pure Sanskrit. OO

भारत विश्वगुरू बनने की ओर

आर्य बीएस शर्मा, कौशाम्बी

हर उस देश को शिक्षित, कौशलयुक्त तथा विचारवान युवा तैयार करने होंगे, जो बिना किसी भेदभाव के प्रगति के रास्ते पर अविरल चलते हुए अपने राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का जीवन स्तर उठाना चाहते हैं

वस्तुत: यह भारतीय संस्कृति की प्रेरणा का द्वौतक है कि सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया के सूत्र का संचार प्रत्येक भारतीय के रक्त एवं प्राणों में संचार होता रहता है। समस्त संसार को अपना परिवार मानने के दृष्टिकोण से ही वसुधैव कुटुम्बकम् का सिद्धांत हमारे राष्ट्र में सर्वोपरि रहा है। किंतु विडम्बना देखिए कि स्वतंत्रता प्राप्ति के 70 वर्षों के पश्चात् भी हमारा राष्ट्र आर्थिक प्रगति और आधुनिक सुख सुविधाओं के दौर में भी व्यक्ति स्वयं को असहाय सा पाता है। इतना ही नहीं, पूरा विश्व पुनश्चय हमारी ओर सच्ची शांति की आशा से दृष्टिपात कर रहा है। चारों ओर वैज्ञानिक अनुसंधानों की सम्पन्नता लपेटे हुए भी लगता है कि हमसे कहीं मूल में कोई भूल हुई है। तमाम समस्याओं का हल हमें नजर आता है, केवल और केवल आर्य समाज के पास जो अपने अनुयायियों में राष्ट्रीय गौरव की भावना को जागृत करने में सक्षम हैं।

यह कहना असंगत नहीं होगा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सबसे बड़े वेद विज्ञान के प्रचारक संगठन आर्य समाज की 19वीं शताब्दी में स्थापना की और 'वेद की ओर चलो' की बात को सशक्त तरीके से विद्वानों के समक्ष रखा। उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ अनुभव किया कि जाति प्रथा जो भारतीय समाज में पूर्ण रूप से पैर जमाये हुए है, की ही हमारी पतन का मूल कारण है। जो हमारे राष्ट्र की प्रगति में एक बड़ा अवरोध है। ऋषि के अनुसार इस हिंदू समाज अथवा भारत राष्ट्र को नवजीवन प्रदान करने के लिए जाति प्रथा का खात्मा करना नितांत आवश्यक है। अभी-अभी हाल ही में भारत के मूर्धन्य एवं विलक्षण प्रतिभाशाली प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने 'गरीबी भारत छोड़ो' एक नारा दिया है और उन्होंने भी आभास किया है कि गांवों में फैली जाति प्रथा हमारी प्रगति में एक बहुत बड़ी रुकावट है और इसको दूर करना नितांत आवश्यक है।

मूलरूप से ऐसा माना जाता है कि भविष्य में प्रभुता, सत्ता उन्हीं के हाथों में होगी जिनके पास ज्ञान का भंडार है। अत: हर उस देश को शिक्षित, कौशलयुक्त तथा विचारवान युवा तैयार करने होंगे, जो बिना किसी भेदभाव के प्रगति के रास्ते पर अविरल चलते हुए अपने राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का जीवन स्तर उठाना चाहते हैं। हमारे राष्ट्र में इस समय 65 प्रतिशत युवा शक्ति है जिससे देश को विश्वगुरु अर्थात पूर्ण विश्व का सिरमौर बनने की संकल्पना के साकार होने का सहज प्रतिदिन प्रतिबिंबित होता है। प्रसंगवत यह उल्लेख करना नितांत आवश्यक है कि भारत को स्वाधीनता के आंदोलन में भी 70 प्रतिशत से अधिक आर्यसमाज का योग रहा। डा. पट्टाभि सीतारमैया के शब्दों में 'गांधी जी से पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती ने राष्ट्र के लिए महान कार्य किया।' उन्होंने भारतीयों को स्वराज का मार्ग दिखाया। वे भारत के युग निर्माता थे। इतना ही नहीं महर्षि दयानन्द सरस्वती जी एक ऐसी सामाजिक संरचना चाहते थे जिसका आधार जातपात का बंधन न होकर गुण, कर्म एवं स्वभाव पर आधारित वर्ण व्यवस्था हो और आज के भारत की यही परम आवश्यक मांग है।

बढ़ती हुई राष्ट्रीय भावना तथा सरकार को सकारात्मक सतत् सहयोग से परिस्थितियां निरंतर परिवर्तित हो रही हैं और राष्ट्र का नाम पूर्व की भांति विश्वपटल पर अग्रिम पंक्ति में स्थान पाने लगा है। इतना ही नहीं, दिन-रात प्रगति एवं सकारात्मक सोच से सारे विश्व को आभास होने लगा है कि हमारे राष्ट्र के पास साधन हैं, क्षमता है, उर्युक्त एवं सतमार्ग गामी तथा पारदर्शी सरकार है और हमारी राष्ट्र की 65 प्रतिशत युवा शक्ति नैतिक तथा बौद्धिक नेतृत्व करने को उद्धत है। जिसके फलस्वरूप अल्पकालमें ही देश को विश्वगुरु बनने की संकल्पना साकार होते नजर आती है। अत: हम आर्य समाजियों को अपने कार्य क्षेत्र में एकाग्र चित होकर, राष्ट्र में फैली अंधविश्वास की भावनाओं एवं कुरीतियों को जड़ से उखाड़ कर फेंकने के लिए काम करना चाहिए तथा जातिविहीन समाज की रचना के लिए सभी अपने आपको आर्य लिखें तथा वेदोत्तर बातों को समूल नष्ट करने लिए प्रतिक्षण तैयार रहे। तभी हम ऋषि द्वारा प्रतिपादित मार्ग पर चलने के अनुयायी कहला सकते हैं। ○○

कौन था वह

- जिसे डा. अंबेडकर ने दलितों का सबसे बड़ा मसीहा कहा।
- जिसने मैकाले की शिक्षा नीति का करारा जवाब दिया।
- जिसे महात्मा गांधी अपना बड़ा भाई कहते थे।
- जिसने चांदनी चौक में संगीनों के सामने सीना खोलकर अंग्रेजी पुलिस को गोली चलाने के लिए ललकारा था।
- जिसे जामा मस्जिद में मिम्बर और स्वर्ण मंदिर के अकाल तख्त साहब से प्रवचन करने का गौरव प्राप्त हुआ।
- जिसने भारत को लोक अदालतों का विचार दिया।
- जिसने भारतीय स्वामित्व में पहला राष्ट्रीय स्तर का दैनिक अखबार प्रकाशित किया।
- जिसने अमृतसर में जलियावाला बाग कांड के बाद कांग्रेस का अधिवेशन करवाने की हिम्मत दिखाई।

वह था

महान बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द

- 20वीं सदी का चमत्कारी एवं प्रेरक व्यक्तित्व।
- देश और धर्म पर बलिदानी।
- निर्भीक संपादक।
- गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का संस्थापक।
- सांप्रदायिक सद्‌भाव का प्रतीक।
- अपने समय का सर्वाधिक लोकप्रिय नेता, दिल्ली का बेताज बादशाह।
- शुद्धि अभियान का प्रणेता।
- महर्षि दयानन्द का उत्तराधिकारी।
- लोक कल्याण के लिए अपनी सारी सम्पत्ति दान कर देने वाला सर्वत्यागी संन्यासी।

- सत्य से परे कोई धर्म नहीं, धर्म की नींव ही सत्य है।
- उच्च से उच्च मस्तिष्क संसार के नाश का कारण है। यदि उसके साथ पवित्र आत्मा सम्मिलित नहीं है।
- जो स्वयंभावी है वे दूसरे को त्याग कैसे सिखलाएंगे?
- इसी जन्म भूमि के लिए कष्ट सहना, इसी की सेवा में सारा पुरुषार्थ लगाना और इसी पर सर्वस्व न्यौछावर करना एक-एक भारतवासी अपना धर्म समझ लें।
- मैं आप सभी देशवासियों से याचना करूंगा कि अपने हृदयों को मातृभूमि के प्रेम जाल से शुद्ध करके प्रतिज्ञा करो कि आज से ये करोड़ों दलित हमारे लिए अछूत नहीं हैं, बल्कि हमारे ही भाई-बहन हैं।
- मैं स्वयं कमजोर, रोगी और वृद्ध होते हुए भी सारे देश में घूमने जाऊंगा, दलित भाइयों का संगठन करूंगा।
- जिस देश और जाति में शिक्षक स्वयं चरित्रवान न हो, उसकी दशा कभी सुधर नहीं सकती।
- तुम्हारा ज्ञान निष्फल है, यदि तुम उस पर आचरण नहीं करते।

दयानन्द देव वेदों का

दयानन्द देव वेदों का, उजाला लेके आये थे।
करो में ओ३म की पावन, पताका लेके आये थे।।
न थे धन धाम मठ मंदिर, न संग चेली न चेला था।
हृदय में वे अटल विश्वास, प्रभु का लेके आये थे।।
गौ, विधवा, दलित दुखिया, अनाथों दीन जन के हित।
नयन में अश्रु कण मानस में करुणा लेके आये थे।।
अविद्या सिन्धु से अगणित, जनों को पार करने को।
परम सुखदायिनी सत्-ज्ञान, नौका लेके आये थे।।
कोई माने न माने सच तो, ये ऋषिराज ही पहले।
स्वराज्य स्थापना का मंत्र, सच्चा लेके आये थे।।
पिलाया जहर का प्याला, किन्हीं नादान लोगों ने।
कि वे जिनके लिए अमृत का, प्याला लेके आये थे।।
'प्रकाशादर्श' शिक्षा का, पुनः विस्तार करने को।
वही प्राचीन गुरुकुल का, संदेश लेके आये थे।।

वेदों का डंका आलम में

वेदों का डंका आलम में, बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने।
हर जगह ओ३म का झंडा, फिर फहरा दिया देव दयानन्द ने।।
अज्ञान अविद्या की हरसू, घनघोर घटाएं छाई थीं।
कर नष्ट उन्हें जग में प्रकाश, फैला दिया देव दयानन्द ने।।
सर पर तूफान बला का था, नजरों से दूर किनारा था।
बनकर मल्लाह किनारे पर, पहुंचा दिया देव दयानन्द ने।।
घुस गये लुटेरे घर में थे, सब माल लूट कर ले जाते।
सद शुक्र हाथ सोतों का, पकड़ बिठला दिया देव दयानन्द ने।।
मक्कारी दगा फरेबों से, जो माल मुफ्त का खाते थे।
सब पोल खोलकर दिल उनका, दहला दिया देव दयानन्द ने।।
उड़ गये होश मतवालों के, मैदान छोड़कर रफू हुए।
हथियार तर्क का निकाल जब, चमका दिया देव दयानन्द ने।।
कब्रों में सर को पटकते थे, कोई दैरो हरम में भटकते थे।
दे ज्ञान उन्हें मुक्ति का मार्ग, बतला दिया देव दयानन्द ने।।
करते थे हमेशा चीख-चीख, तौहीन वेद अकदस की जो।
सर उनका वेदों के आगे, झुकवा दिया देव दयानन्द ने।।
सब छोड़ चुके थे धर्म कर्म, गौरव गुमान ऋषि-मुनियों का।
फिर संध्या और हवन करना, सिखला दिया देव दयानन्द ने।।
विद्यालय गुरुकुल खुलवाये, कायम हर जगह समाज किये।
आदर्श पुरातन शिक्षा का, बतला दिया देव दयानन्द ने।।
बलिदान किया बलिवेदी पर, जीवन 'प्रकाश' हंसते-हंसते।
सच्चे रहबर बनकर सबको, चेता दिया देव दयानन्द ने।।
दीपक जला करोड़ों दीप जगमगा उठे।
जंजीरों से जकड़े स्वदेश को रात दिखाई तूने।।
जिसको न काल बुला सका वह शमा जलाई थी तूने।
घनघोर तिमिर के आंगन में तू बीज ऊषा के बोया था।।
आज लगाई थी तूने जब सारा भारत सोया था।।

पावन पर्व ऋषि जन्मोत्सव व बोधोत्सव की शुभकामनाएं!

परमात्मा से मिलन के लिए आत्मिक सुधार जरूरी

आचार्य सुदर्शन

परमात्मा के संपूर्ण गुणों से संपन्न उनका अंश आत्मा हमारे अंदर है। हम अपनी आत्मा के संपर्क में रहकर परमात्मा से जुड़ने का प्रयास करें। बड़े ही आश्चर्य की बात है कि आज हर व्यक्ति परमात्मा को प्राप्त करना चाहता है। दिन-रात वह इसी प्रयास में लगा रहता है कि वह परमात्मा को प्राप्त कर ले। वह इसके लिए पूजा-अर्चना, हवन, पाठ आदि माध्यमों का सहारा लेता है।

लेकिन सही मायने में वह परमात्मा को पाने का प्रयास करता ही नहीं है। ये तमाम चीजें तो एक परंपरा के तहत चली आ रही हैं, सभी लोग, उन्हीं बातों में लगे हुए हैं, लेकिन वे कोई सकारात्मक प्रयास नहीं करते। अगर किसी व्यक्ति को परमात्मा को प्राप्त करना है, तो उसे स्वयं ही प्रयास करना होगा। दुनिया में आज तक कोई ऐसा गुरु नहीं हुआ है जो हमारे बदले में वह तपस्या कर ले और फल हमें प्राप्त हो जाए।

तमाम गुरु तो हमें मार्ग बताने वाले हैं, वे हमारे बदले में कार्य करने में समर्थ नहीं हैं। कोई व्यक्ति किसी महापुरुष को जिस भाव से आमंत्रित करता है, उसे उसका फल भी उसी भावानुरूप ही मिलता है। जो लोग हृदय से आमंत्रित करते हैं, तो दोनों लोगों के हृदयों का मिलन होता है और इसके बाद जो फल मिलता है वह भी सकारात्मक होता है। जब उनके हृदय से दुआ या आशीर्वाद निकलता है तो वह बहुत ही प्रभावकारी होता है।

जब आप दीपावली के अवसर पर अपने घर में लक्ष्मी के आगमन पर उनके स्वागत के लिए अपने घर की साफ-सफाई करते हैं, दीवारों पर रंग रोगन करते हैं और फिर दीप जलाकर माता लक्ष्मी के आगमन की प्रतीक्षा करते हैं। आप सोचते हैं कि माता लक्ष्मी के आगमन पर उन्हें कोई कठिनाई न हो, वे सुगमता से आपके घर आ सकें और आपकी तैयारी देखकर प्रसन्न हो जाएं। आप दीवाली पर इतनी साफ-सफाई कर लेते हैं, लेकिन परमात्मा को तो आप चौबीसों घंटे अपने घर पर बुलाना चाहते हैं, तो क्या आपने इसके लिए अपने घर की सफाई कर ली? क्या आपने अपने घर का कूड़ा-करकट बाहर फेंक दिया? जिस दिन आपके शरीर रूपी घर से कूड़ा-करकट निकल जाएगा, आपको परमात्मा के स्वरूप का प्रकाश धीरे-धीरे प्राप्त होने लगेगा। इसके बाद आपके शरीर का रूपांतरण हो जाएगा।

हमारे यहां जितने भी गुरु महात्मा हुए हैं, वे कोई परमात्मा नहीं है। उन्होंने तो अपनी साधना के बल पर परमात्मा से सीधा सम्पर्क स्थापित कर लिया है और उसके विद्युत प्रवाह से यह गुरुओं के शरीर की जितनी ऊर्जा होती है, वह चार्ज हो जाती है। आप में और उनके शरीर में कोई अंतर नहीं है। वे भी भोजन करते हैं, आप भी भोजन करते हैं लेकिन उनका शरीर चार्ज हो चुका है और आपका शरीर अभी चार्ज नहीं हुआ है।

अगर किसी व्यक्ति को परमात्मा को प्राप्त करना है, तो उसे स्वयं ही प्रयास करना होगा। दुनिया में आज तक कोई ऐसा गुरु नहीं हुआ है जो हमारे बदले में वह तपस्या कर ले और फल हमें प्राप्त हो जाए। तमाम गुरु तो हमें मार्ग बताने वाले हैं, वे हमारे बदले में कार्य करने में समर्थ नहीं हैं।

चुंबक और सामान्य लोहे में जो अंतर होता है, वही अंतर आपके शरीर और गुरुओं के शरीर में होता है चुंबक एक चार्ज लोहा है, लेकिन सामान्य लोहा चार्ज नहीं किया होता। इसीलिए जिस दिन हमारी वृत्ति जाग जाएगी और आपके शरीर की ऊर्जा चार्ज करने के लिए किसी मेन लाइन से आप जुड़ जाएंगे, तो फिर आपको संतत्व और बुद्धत्व की प्राप्ति हो जाएगी। आपको परमात्मा के क्षेत्र में प्रवेश की अनुमति मिल जाएगी। अतः आप परमात्मा की चिंता छोड़ दें। सबसे पहले अपने आत्मिक सुधार की बात करें।

जिस दिन आपका शरीर चार्ज हो जाएगा, उस दिन से आपके शरीर का एक-एक क्षण महोत्सव हो जाएगा, एक-एक पल प्रसन्नता से भर जाएगा। इसके लिए आपको केवल रूपांतरित होने की आवश्यकता है। जिस क्षण आप रूपांतरित हो जाएंगे, उसी क्षण परमात्मा आपको एक पात्र समझकर उसमें प्रवेश कर जाएंगे। सभी जानते हैं कि लोहे और लकड़ी में से लोहे के द्वारा तो विद्युत

प्रवाह हो जाता है। लेकिन लकड़ी के माध्यम से यह असंभव है। लकड़ी तो ऊष्मा या विद्युत का कुचालक होता है, जबकि लोहा इनके लिए सुचालक का रूप धारण कर ले, ताकि जैसे ही परमात्मा की धारा छूटे, वह सीधे आपके शरीर में प्रवेश कर जाए। उस समय आप भी अपने को इस संसार से ऊपर उठा हुआ महसूस करेंगे।

वे संत लोग ही होते हैं, जो अपने को चार्ज कर चुके हैं और उसके बाद उनके जीवन में दुख-सुख का कोई स्थान नहीं रहता। आपने उन्हें पुष्प-माला पहना दी, उन्होंने पहन ली, उन्हें कोई चिंता नहीं कोई राग द्वेष नहीं रहता। जो दुख और सुख से ऊपर उठ जाए, वही तो परमात्मा का सच्चा भक्त है। कृष्ण ने अर्जुन से कहा था- तुम सुख और दुख से ऊपर उठ जाओ, इनसे ऊपर उठने की कला का नाम है- परमात्मा को पाने का एक प्रयास। आप किसी मंदिर या धार्मिक स्थल पर जाकर रामचरितमानस या किसी अन्य पुस्तक का पाठ करते हैं। कभी आप अपने शरीर पर भी रामचरितमानस का पाठ कर लें। आप गंगा स्नान से केवल अपने शरीर को धोते हैं। शरीर को धोने से कुछ नहीं होगा, आप अपने शरीर के अंदर के विकारों को धोने का प्रयास करें। आप अपने अहंकार, काम, क्रोध, लोभ, मद एवं मोह को गंगा में विसर्जित कर दें। गंगा स्नान का अर्थ ही होता है कि गंगा में प्रवेश के उपरांत अपनी तमाम बुराइयों का विसर्जन कर देना।

लोग हवन कुंड बनवाते हैं और आत्मकल्याण यज्ञ भी करवाते हैं, जिसे महाराज परीक्षित ने भी करवाया था। आत्मकल्याण यज्ञ अर्थात् जिस यज्ञ को आप अपनी भलाई के लिए करते हैं। कुछ लोग विश्वकल्याण के लिए भी यज्ञ करवाते हैं, कुछ यज्ञ देश कल्याण के लिए भी होते हैं। लेकिन सबसे पहले आप अपने कल्याण के लिए हवन करें और उस हवनकुंड में अपने शरीर की तमाम दुष्प्रवृत्तियों और बुराइयों को भस्म कर दें। इसके बाद आप निष्पाप, निष्कलंक, सरल, सुगम और बोधमय हो जाएंगे और तभी आप परमात्मा को अपने अंदर बुलाकर बैठा सकेंगे।

हमारे यहां जितने भी गुरु महात्मा हुए
हैं, वे कोई परमात्मा नहीं है।
उन्होंने तो अपनी साधना के बल
पर परमात्मा से सीधा सम्पर्क
स्थापित कर लिया है और उसके
विद्युत प्रवाह से यह गुरुओं के
शरीर की जितनी ऊर्जा होती है,
वह चार्ज हो जाती है। आप में और
उनके शरीर में कोई अंतर नहीं है।
वे भी भोजन करते हैं, आप भी
भोजन करते हैं लेकिन उनका
शरीर चार्ज हो चुका है और आपका
शरीर अभी चार्ज नहीं हुआ है।
चुंबक और सामान्य लोहे में जो अंतर
होता है, वही अंतर आपके शरीर
और गुरुओं के शरीर में होता है
चुंबक एक चार्ज लोहा है, लेकिन
सामान्य लोहा चार्ज नहीं किया
होता। इसीलिए जिस दिन हमारी
वृत्ति जाग जाएगी और आपके
शरीर की ऊर्जा चार्ज करने के लिए
किसी मेन लाइन से आप जुड़
जाएंगे, तो फिर आपको संतत्व
और बुद्धत्व की प्राप्ति हो जाएगी।

'विश्ववारा संस्कृति' : सदस्यता आवेदन पत्र

नाम : ....

आयु : .... दिनांक : ....

पता : ....

....

शहर : .... राज्य : .... पिन कोड : ....

फोन : .... मोबाइल : .... ई-मेल ....

नगद/चैक/मनी आर्डर/डीडी संख्या : ....

संरक्षक/आजीवन/पंच वर्षीय/वार्षिक सदस्यता हेतु संलग्न है।

चैक-मनी आर्डर 'आर्य समाज' नोएडा के नाम भिजवाएं अथवा आप लोग सीधे ही 'युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया' नोएडा, सेक्टर-33 में खाता संख्या : 1483010100182, IFSC-UTB10SCN560 में जमा कराकर रसीद की प्रतिलिपि निम्न पते पर भेजें-

प्रबंध संपादक : 'विश्ववारा संस्कृति'

आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, (उप्र), संपर्क सूत्र : 0120-2505731, 9871798221

ई-मेल : info.aryasamajnoida33@gmail.com

निरोग और स्वस्थ रहने के लिए फल भी खाएं

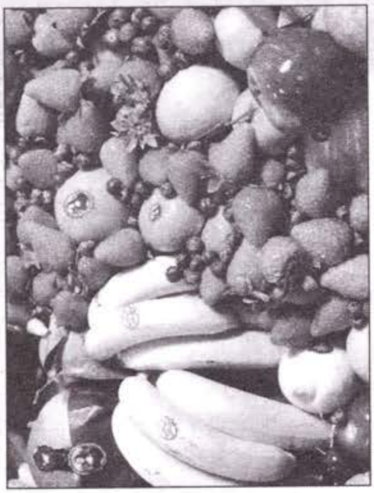

फलों में स्वास्थ्य-वर्धक एवं रोग नाशक तत्व बहुत मात्रा में होते हैं। कुछ फलों में पौष्टिक तत्व इस प्रकार हैं-

अंगूर : अंगूर में मौजूद एक कम्पाउंड कैंसर से सुरक्षा करता है। अंगूर में काफी मात्रा में पाया जाने वाला 'एंटी आक्सीडेंट' हृदय के लिए बहुत लाभदायक होता है। विटामिन सी भारी मात्रा में होता है। एक कप अंगूर खाने से 86 कैलोरीज ऊर्जा मिलती है।

केला : केले में प्रोटीन, कैल्शियम, पोटेशियम, फास्फोरस, लोहा व विटामिन-सी होते हैं तथा इसमें लगभग 100 कैलोरीज ऊर्जा मिलती है।

संतरा : इसमें विटामिन-ए, विटामिन-सी, सोडियम, पोटैशियम, तांबा, गंधक, मैगनीशियम, कैल्शियम आदि अनेक पौष्टिक तत्व होते हैं। इसी प्रकार अन्य फल-सब्जियां खाएं और स्वस्थ रहें।

क्या पिएं-क्या न पिएं : 1. फलों व सब्जियों के रस पिएं, क्योंकि सब्जियों के रस में अनेक पौष्टिक तत्व होते हैं। जैसे केरोटीन विटामिन-ए, एमीनो एसिड (जो लाभदायक प्रोटीन के रूप हैं) लोहा इत्यादि। फलों के रसों में कार्बोहाइड्रेट्स विटामिन-सी तांबा तथा अन्य खनिज पदार्थ मौजूद होते हैं। सब्जियों के रसों में चोलाइन नामक एक तत्व होता है, जो सुस्त यकृत को स्वस्थ कर देता है तथा भूख बढ़ाता है। सब्जियों के रसों का अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए भोजन करने से आधा घंटा पूर्व सेवन करना चाहिए।

2. दूध पिएं, विशेषकर गाय का दूध, क्योंकि- हार्वर्ड मैडिकल स्कूल के प्रोफेसर एम.जे. रोजेनो के अनुसार- "Milk is rich in all the known Vitamins. Milk in fact is the only single article of food that fairly represents a complete diet. Milk is unexcelled for growing children. It has no equal for promotion of growth as nutrition".

दूध एक संपूर्ण आहार है और सभी विटामिनों का भंडार है इसकी तुलना किसी भी पदार्थ से नहीं की जा सकती। बच्चों के विकास के लिए तो यह रामबाण है।

गाय के दूध से बच्चों का कद बढ़ता है, नेत्र-ज्योति तीव्र होती है तथा कई रोगों से बचाव होता है।

शराब नहीं पिएं, क्योंकि : 1. शराब मानव में दोष उपजाती है और उससे अपराध करवाती है। फ्रांसिस बेकन के अनुसार सम्पूर्ण विश्व के अपराध मिलकर भी मानव जाति को उतनी हानि नहीं पहुंचाते जितना अकेला 'मद्यपान'। शराब से होने वाले भयंकर दुष्परिणामों की गणना एक मद्य-विक्रेता ने निम्न उत्तर के द्वारा बड़े सारगर्भित ढंग से प्रस्तुत की। उस मद्य-विक्रेता से जब प्रसिद्ध कवि कालीदास ने शराब के मटकों की ओर इशारा करते हुए पूछा कि उनमें क्या है, तब उसने कहा-

''मदः प्रमाद, कलहश्च निद्रा बुद्धिक्षयो धर्म विपर्ययश्च। सुखम कंथा, नरकस्य पंथा, अष्टावनर्था धटके वसन्ति॥''

इस मटके में आठ दोष या अवगुण भरे हैं- मादकता, सुस्ती, कलह, निद्रा, बुद्धि का नाश, धर्म का पतन, सुख का नाश तथा विपत्तियों का रास्ता।

2. मद्यपान से निम्न भयंकर रोग हो जाते हैं : दृष्टि दोष, वाणी का लड़खड़ाना, शरीर और मन की शक्तियों में क्षति, टांगे लड़खड़ाना, हृदय रोग, टीबी, पीलिया, सांस रोग, लीवर की सूजन (हेपेटाइटिस), सिरहोसिस, लकवा, तिल्ली का बढ़ना, पेट में सूजन, पेट में फोड़ा व जख्म हो जाने से कभी-कभी खून की उल्टी होकर मौत तक हो जाना, कैंसर, पागलपन, विभिन्न गुप्त रोग, क्रूर स्वभाव (पर्शिया के बादशाह ने शराब के नशे में हजारों बेकसूर व असहाय लोगों को मौत के घाट उतार दिया था)। इससे आर्थिक और पारिवारिक नाश होता है।

3. शराब थोड़ी मात्रा में भी हानिकारक है : पीजीआई चंडीगढ़ के प्रोफेसर डा. पीएल वाही के कथनानुसार 'मात्रा थोड़ी सी भी क्यों न हो, शराब को पीना प्रत्येक अवस्था में हानिकारक है। यह एक भ्रांति है और सर्वथा झूठ है कि शराब का एक या दो पैग प्रतिदिन लेने से व्यक्ति स्वस्थ रहता है।'

OO सुभाष चन्द्र गुप्ता

फलों व सब्जियों के रस पिएं, क्योंकि सब्जियों के रस में अनेक पौष्टिक तत्व होते हैं। जैसे केरोटीन विटामिन-ए, एमीनो एसिड (जो लाभदायक प्रोटीन के रूप हैं) लोहा इत्यादि। फलों के रसों में कार्बोहाइड्रेट्स विटामिन-सी तांबा तथा अन्य खनिज पदार्थ मौजूद होते हैं। सब्जियों के रसों में चोलाइन नामक एक तत्व होता है, जो सुस्त यकृत को स्वस्थ कर देता है तथा भूख बढ़ाता है। सब्जियों के रसों का अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए भोजन करने से आधा घंटा पूर्व सेवन करना चाहिए।

मंत्रों की महिमा एवं शक्ति

संतोष नंदवानी
उपमंत्री, आर्यसमाज मयूर विहार-1

हमारे प्राचीन ऋषि, मुनियों की देन है 'यज्ञकर्म'। आदिकाल से राजा-महाराजा भी अपने राज्य की सीमा बढ़ाने के लिए 'अश्वमेघ यज्ञ' रचाते थे। महर्षि बाल्मीकि ने भी अपनी महान कृति 'बाल्मीकि रामायण' में भी श्रीरामचन्द्र जी द्वारा रचे गए 'अश्वमेघ यज्ञ' का बड़ा ही सुंदर वर्णन किया है। ऐसे महायज्ञ तो कई-कई दिन चलते रहते थे और अग्नि निरंतर ज्वालायमान रहती थीं।

अपनी प्रजा के कल्याण हेतु 'स्वस्तिवाचन मंत्रों' के द्वारा, शांति के लिए शांतिकरण मंत्रों का उच्चारण किया जाता था। वही प्रथा आज भी प्रचलित है। सामवेद का तो बड़ी ही सुंदर ऋचाओं के गायन द्वारा यज्ञ रचाए जाते थे और आज भी किए जा रहे हैं। हमारे ऋषियों, विद्वानों का इनके द्वारा संकल्प पूर्ति, मनोकामनाओं का पूर्ण होने में दृढ़ विश्वास था। अत: मंत्रों की शक्ति एव महिमा वास्तव में ही अनिर्वचनीय है।

मंत्रों की उत्पत्ति कई प्रकार से होती है

निरुक्त में : मंत्रा मनात्-मन से संचारित होने वाली प्रक्रिया को मंत्र कहते हैं।

शतपथ ब्राह्मण में : 'वाग्वैमंत्र' परिष्कृत वाणी से उच्चारित शब्द-श्रृंखला को मंत्र बताया गया है।

तंत्र विज्ञान : 'मंत्र गुप्त भाषणे' रहस्यमय गुप्त संभाषण को मंत्र कहा गया है।

इन तीनों का समन्वय करने से एक बात पूरी होती है- जिसमें मानसिक एकाग्रता एवं निष्ठा का समुचित समावेश हो, परिष्कृत व्यक्तित्व की परिमार्जित वाणी से जिसकी साधना की जाए, जिसकी रहस्यमय क्षमता पर गहन श्रद्धा हो तथा जिसका अनावश्यक विज्ञापन न करके गोपनीय रखा जाए।

मंत्र शक्ति में चार तथ्य काम करते हैं- ध्वनि, संयम, उपकरण और विश्वास। शब्द संरचना और उच्चारण की शुद्धता युक्त ध्वनि ही सार्थक होती है। जब मंत्र साधना के प्रति श्रद्धा विश्वास की कभी न हो। हृदय को 'अग्नि' और जिह्वा को सोम कहा गया है। दोनों के समन्वय से चमत्कारी आत्मशक्ति उत्पन्न होती है। भावना और कर्म की उत्कृष्टता से मंत्र साधना प्राणवान बनती है।

मंत्र विनियोग के पांच अंग हैं-

1. ऋषि अर्थात् निष्णात् मार्ग दर्शक के निर्देश में रहना।
2. मंत्र की ताल-लय, छन्द का क्रम, गति उतार-चढ़ाव, वाचिक-उपांशु के आधार पर मंत्र की क्षमता में भारी अंतर पड़ता है।
3. विनियोग का तीसरा चरण 'देवता' है। सूक्ष्म जगत से चलने वाली शक्ति प्रवाहों की भांति मंत्र में भी विभिन्न परतें होती हैं जिन्हें शक्ति प्रवाह कहते हैं। इन्हीं शक्ति तरंगों को ही देवता कहते हैं।
4. चौथा चरण 'बीज' कहलाता है 'बीज' अर्थात् उद्‌गम स्त्रौत। स्थूल-सूक्ष्म शरीरों में 'अनेक दिव्य केंद्र हैं। मंत्रों के साथ बीज एवं सम्पुट बदल देने से उनकी क्षमता एवं दिशा में अंतर पड़ता है।
5. पांचवां अंग है- 'तत्व' अर्थात् मंत्र का लक्ष्य। किस प्रयोजन, संकल्प, उद्‌देश्य का निर्धारण है मंत्र। मंत्र का तालमेल बिठाने के लिए स्थान, ऋतु, मुहुर्त, तीर्थ आदि प्रकृति के तत्वों का विशेष ध्यान रखा जाता है।

'यज्ञकर्म' आदिकाल से राजा-महाराजा भी अपने राज्य की सीमा बढ़ाने के लिए 'अश्वमेघ यज्ञ' रचाते थे। महर्षि बाल्मीकि ने भी अपनी महान कृति 'बाल्मीकि रामायण' में भी श्रीरामचन्द्र जी द्वारा रचे गए 'अश्वमेघ यज्ञ' का बड़ा ही सुंदर वर्णन किया है। ऐसे महायज्ञ तो कई-कई दिन चलते रहते थे और अग्नि निरंतर ज्वालायमान रहती थीं। अपनी प्रजा के कल्याण हेतु 'स्वस्तिवाचन मंत्रों' के द्वारा, शांति के लिए शांतिकरण मंत्रों का उच्चारण किया जाता था। वही प्रथा आज भी प्रचलित है। सामवेद का तो बड़ी ही सुंदर ऋचाओं के गायन द्वारा यज्ञ रचाए जाते थे और आज भी किए जा रहे हैं। हमारे ऋषियों, विद्वानों का इनके द्वारा संकल्प पूर्ति, मनोकामनाओं का पूर्ण होने में दृढ़ विश्वास था। अतः मंत्रों की शक्ति एव महिमा वास्तव में ही अनिर्वचनीय है।

इस क्रम व्यवस्था को अपनाने से मंत्र को जागृत एवं शक्ति सम्पन्न बनाया जा सकता है। जिस प्रकार टेलीफोन के डायल नम्बर बदल देने से अलग-अलग स्थानों पर बातें होने लगती हैं, उसी प्रकार मंत्र का क्रम बदल देने से मंत्र का उद्‌देश्य, प्रयोजन स्वर-लय-ताल ही परिवर्तित हो जाते हैं। इसीलिए हमारे प्राचीन ऋषि, मुनियों ने मंत्रों की विशेष साधना करके इनकी रचना की है। जब तक सृष्टि विद्यमान रहेगी तब तक मंत्रों की मंगल ध्वनि गूंजती रहेगी। इसी कारण वेदों में मंत्रों के उच्चारण करने का विशिष्ट स्थान एवं महत्व है।

मंत्रों के उच्चारण में सहायता मिले, इसके लिए वेदों में प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में ऋषि, देवता, छंद एवं स्वर आदि का विस्तृत उल्लेख किया गया है।

॥ ओ३म् ॥

समाचार - सूचनाएं

- 91वां स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस 25 दिसम्बर को भव्य शोभायात्रा के पश्चात रामलीला मैदान में विशाल सभा का आयोजन व विद्वानों के स्वामी श्रद्धानन्द श्रद्धा-सुमन अर्पित करने के पश्चात् समापन हुआ। कार्यक्रम में मेघालय के गवर्नर महामहिम माननीय श्री गंगा प्रसाद, संन्यासी वृंद, डा. सत्यपाल सिंह, महाशय धर्मपाल, श्री धर्मपाल आर्य एवं अन्य प्रबुद्ध आर्यजनों ने उपस्थित होकर कार्यक्रम सफल बनाया। आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल के अधिकारियों व ब्रह्मचारियों का योगदान रहा।
- आर्य केंद्रीय सभा के प्रकाशन विभाग द्वारा दिल्ली राज्य के तत्वावधान में विश्व पुस्तक मेला (6 जनवरी से 14 जनवरी) में स्टॉल लगाए गए व अन्य पुस्तकों के अलावा करीब 50,000 प्रचारार्थ सत्यार्थ प्रकाश 10/- रुपये में बांटे गए जिसमें आर्यजनों ने सहयोग प्रदान किया।
- आर्य समाज गांधीधाम (गुजरात) का 64वां वार्षिक अधिवेशन 12 से 14 जनवरी 2018 को हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ। जिसमें आचार्य डा. जयेन्द्र कुमार, प्रधानाचार्य आर्ष गुरुकुल नोएडा विशेष रूप से आमंत्रित किए गए।
- 26 जनवरी को 69वें गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य मे भव्य कार्यक्रम आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल नोएडा में आयोजित किया गया। प्रधान जी द्वारा ध्वजारोहण के पश्चात ब्रह्मचारियों द्वारा कविता पाठ, भाषण व अन्य कार्यक्रम आयोजित किये गये। भव्य काव्योत्सव का आयोजन भी किया गया।

आगामी कार्यक्रम :

- 10 फरवरी महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव केंद्रीय युवक परिषद के सौजन्य से सांसद श्रीमती मीनाक्षी लेखी निवास 14 महादेव मार्ग प्रात: 9 बजे से।
- 10 फरवरी 194वां स्वामी दयानन्द जन्मोत्सव दिल्ली प्र. सभा के सौजन्य से भजन व संध्या प्रेरक प्रवचन। दशहरा ग्राउंड श्रीनिवासपुरी, सायं 3 से 7 बजे तक।
- 11 फरवरी जेएनयू कन्वेंशन सेंटर, संकल्प महोत्सव। महर्षि के जन्मोत्सव पर समय 2 से 5 बजे तक।
- 12,13,14 फरवरी को टंकारा, गुजरात में ऋषि बोधोत्सव हर्षोल्लास से मनाया जा रहा है। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि महामहिम देवव्रत जी राज्यपाल, हिमाचल व पद्मश्री डा. पूनम सूरी जी की अध्यक्षता में सम्पन्न होगा।
- विशाल महर्षि मेला, महर्षि दयानन्द बोधोत्सव के अवसर पर आर्यसभा, दिल्ली के तत्वावधान में 13 फरवरी 2018 को रामलीला मैदान दिल्ली में आयोजित होगा। सभा : 3 से 6 बजे तक।

सूचना : जनवरी मास में जिन माननीय सदस्यों का वार्षिक शुल्क समाप्त हो गया है उनसे सविनय अनुरोध है कि अपना वार्षिक शुल्क 250/-रुपया आर्य समाज, बी-69 सेक्टर-33, नोएडा (उप्र), को भिजवाने की कृपा करें ताकि उनकी पत्रिका 'विश्ववारा संस्कृति' निरंतर प्रेषित की जाती रहे।

■ प्रबंध संपादक : 9871798221

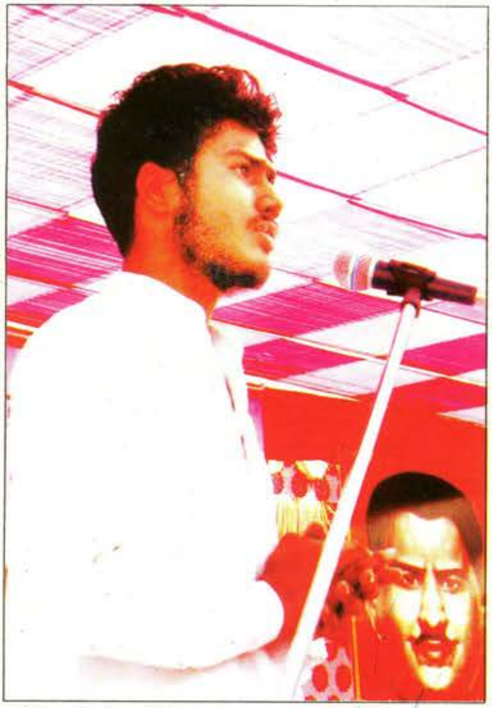

क्रांतिकारी, देश भक्ति का काव्यपाठ करते ब्र. विशाल राणा।

माता शकुंतला सेतिया का सम्मान करतीं श्रीमती संतोष लाल महिला समाज कोषाध्यक्ष।

महिला सम्मेलन में मंचासीन विदुषी माताएं

प्रथम विश्ववेद सम्मेलन के अवसर पर आर्यसमाज नोएडा की स्मारिका 'विश्ववारा संस्कृति' आचार्य बालकृष्ण जी को भेंट करते हुए आर्य कै. अशोक गुलाटी महामंत्री, उप प्रधान श्री विजेन्द्र कठपालिया, पत्रिका व्यवस्थापक ओमकार शास्त्री एवं ब्र. विशाल आर्य।

मथुरा, वृंदावन भ्रमण के समय शिक्षक ओमकार शास्त्री जी के साथ गुरुकुल के ब्रह्मचारीगण।

वृंदावन के प्रेम मंदिर में आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारी आचार्यों के साथ।

विश्ववारा संस्कृति

आर्य समाज, बी-69, सैक्टर-33, नोएडा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731, 4206693